

श्री जैनधर्मप्रकाश।

जो जब्याः प्रविशतान्तरङ्गराज्ये प्रथमेव प्रष्टव्या गुरवः । सम्यग्नुष्ठेयस्तु
दुपदेशः । विधेयाहिताग्निनेवाग्नेस्तत्तुपचर्या । कर्तव्यं धर्मशास्त्रपारगमनं । विमर्शन
यस्तात्पर्येण तदावार्थः । जनयितव्यस्तेन चेतसोऽवष्टम्नः । अनुशीलनीया ध
शास्त्रे यशोकाः कियाः । पर्युपासनीयाः सन्तः । परिवर्जनीयाः सततप्रसन्नतः
रहणीयाः स्वरूपोपमया सर्वजन्तवः । ज्ञापितव्यं सत्यं सर्वभूतहितमपरुपमनिका
परोऽह्य वचनं । न ग्राहमणीयोऽपि परमपदत्वं । विधेयं सर्वामामस्मरणप्रसन्नकर
प्रगार्यनपनिरीक्षणमनन्तिजापणं च स्त्रीणां । कर्तव्यो वहिरङ्गान्तरङ्गसङ्गत्यागः
विधातव्योऽनवरतं पञ्चविधः स्वाध्यायः ।

उपमितिनवप्रपञ्चः

पुस्तक २५ खुँ. कार्तिक सं. १६६६ शाके १८८१. अंक ८ भेदः

ॐ अहं नमस्तत्त्वाय.

उपदेश पद्.

खंडवी—काम छे हुष्ट विकारी, आहा ! भलु ! काम छे हुष्ट विकारी—अे रा
भस्त लयो तन धनमें, सुसाइर ! भस्त लयो तन धनमें;
उड जानां एड छीनमें, सुसाइर ! भस्त लयो तन धनमें; ए एड
हिंस तन डेरा छेड लयेगा, हुंसा परबव वनमें;
भीट्टीका भड पुंक दीयेगा, भनकी रहेगी भनमें. सुसाइर० १
अळड ईळड गुछ भरोडत, वास पठावत जनमें;
पर्षुकुटी जणवतां आभर, पीर पडेगी यवनमें. सुसाइर० २
तन धन वैखव सुपना जेसा, साध्या रंग गगनमें;
पलडी अभर नहि प्राणीने, राव २३ छाय छीनमें. सुसाइर० ३
इया अलिमान करे भनमर्कट, सांकेत्यंह द्वजनमें;
तन धन अर्पणु कर परमारथ, भन धर गलुडा लज्जनमें. सुसाइर० ४

ज्ञानसार सूत्र स्पष्टीकरण.

ज्ञानाष्टक (५)

(अनुसंधान युग २०० था)

हे य तु चुप्तयोजे प्राप्त थयेवी शुल्क सामवीनी सद्गुणता केम थर्ह थडे ते
शास्त्र विनि शास्त्रादार अतावे छे—

स्वज्ञव्यगुणपर्याय-चर्या वर्या पराऽन्यथा ।

इति इत्तात्मसंतुष्टिः-गुणिज्ञातस्मितिर्युनेः ॥ ५ ॥

अत्यार्थ—सर्वे धरपट तरुने आत्माना शुण्यपर्यायनीज पर्यालोचना
करती रुहे छे, अन्य उपायिभां काँध पाणे आत्महित नथी, ए प्रभावे आत्माभां
बहुत सतीषकारी सुषिष्ठज्ञानने मुनि लागे छे; एवी निश्चित दृष्टि रणीने अंयभ
सिद्धान्त राखये एव इत्याखुदारी क्षतातन साधुनो मार्ग छे, अने एज गोक्षनो
मार्गनार्थी छे,

प्रियरक्षु—जगभां के स्थान उपर प्रवास करनारने के हिंशा तरक्ष शमन
उत्तरानु छोय ते चैक्षस लक्ष्मां राजीने ज वाहन चत्रवावाथी धारेवा स्थाने पेहांची
शक्षय छे, तेम सुमुक्षु जनोने पाणे गोक्षमार्गभां प्रवृत्ति करतां स्वद्रव्य शुण्य पर्य
सामे पूर्वनु लक्ष राखवानी जडू छे. जेम जूदा जूदा धर्मां मुद्रद्रव्यां अने कुंडल
इत्ताडिभां सुवर्णु द्रव्य सामान्य वर्तेछे, तेम हेव मनुप्यादिक गतिभां आत्म द्रव्य
सामान्य वर्तेछे. जेम तत्वमां तेव, हृष्मां वी अने काष्ठमां अस्ति रहेछे, तेम अत्येक
शरीरमां आत्म द्रव्य व्यापीने रहे छे. एक मुद्रद्रव्यना अनेक धर्म-पर्याय अने छे,
एक सुवर्णु द्रव्यना कुटुकुंडलाडिक अनेक आकूपण्डुरप पर्याय अने छे, तेम एक
आत्म द्रव्यना पाणे हेव मनुप्य तिर्यंच आहिक अनेक पर्याय संबंधे छे शुद्ध पर्याय
अने असुद्ध पर्याय एम गे प्रकारनापर्याय छोय छे. द्रव्यभां निरंतर अंडीलावे रहेन-
नारा शुण्य कुँडेवाय छे, अने क्षणे क्षणे अथवा डुभेशः अदलाई जनारा पर्याय
कुँडवाय छे. यतः “ सहनाविनो गुणाः क्रमनाविनश पर्यायाः ” अर्थात्
द्रव्यनी साथेज सदा अंडीलावे रहेनारा पर्यायने शुण्य कुँडीने आत्मवाभां
आवे छे, अने कुमे कुमे नवनव इपने धारण्य करनार पर्यायने ‘ पर्याय ’ संज्ञा
व्यवहारभां आवे छे; अथवा तो तेमने अनुकमे निल्प पर्याय अने अनिल्प पर्याय
कुँडवाभां आवे छे. माटीभां वर्णु गंध रस स्पर्श ए तेना निल्प पर्याय छे, अने

१ मारी, २ उड्ड लिंगेभामा.

नानासार द्वारा संपृष्ठीकरण.

३२५

स्थास, कुसूब, कलसाहित तेना अनित्य पर्याय हे. भीतता; चीकछाशा विग्रहसोनाना नित्य पर्याय याने शुश्रु छे, अने कटक कुड़वाहिक तेना अनित्य पर्याय हे: तेवीज दीते शान दर्शन चारित्राहित आत्माना नित्य पर्याय हे, अने नर्त तिर्थयाहि अथवा हे मतुभ्याहि गति तेमज डेह लक्ष्मी विग्रह तेना अनित्य पर्याय हे. जेम हुंस क्षी नीरनी वडेंचणु करी क्षीर मानने अहंशुकरी जण मानने तलु हेहे, तेम तत्त्वज्ञान शुद्धना शुपाथी जेनामां सदिवेक जग्यो हे ते त्वपरने, शुश्रु पर्यायने, शुद्ध अशुद्ध ने, नित्य अनित्य वस्तुने यथार्थ ओणाभी ले शुद्ध, नित्य अने पोतानीज घूँद वस्तु हे लेने पकडी ले हे, अने जे अशुद्ध, अनित्य अने पर एवी झोटी वस्तु : तेने नाळ हेहे. जेम राज्जुंसने रवालाविक रीतेज मानस सरोवरनां निर्मणज्ञ मां रति धाय हे, तेम अभ्यग् शानवान विवेकीने पणु आत्माना स्वालाविक शुश्रुम ज्ञ प्रीति अंधाय हे. कठाच कर्मवशात् तेने संसारव्यवहार सेववो पडे हे, तोप ते तेमां राचनो नथी. तटस्थपणे गृहव्यवहारने सेवे हे. तेनी अंतरंग ग्री तो भौक्षसाधनमांज लाणी रडे हे, तेनेज सारभूत सभजे हे ; बाढीना संसा अप्यन्यने केवण उपाधित्रृप अने असारज समजे हे. जेने घेणरना लोजनमां ग्री लाणी छाय हे तेनेम अन्यलोजन करतां छतां घेणर मणवानी वाट जेया करे हे ते शानवान् विवेकी पशु कर्मवशात् गृहव्यवहारने सेवतो छतो आत्म साधनना अ काशने अतुरताथी जेवा करे हे. गृहव्यवहारने सेवतां छतां दरेक व्यवहारप्रस तेनी विवेकदृष्टि केवी जगृत रडे हे, तेनो कंधक चितार श्रीमद् उपाध्यायल महारा परमात्मानी द्रव्यपूजना अंभंघे विवेकी गृहस्थनी अंतरंग दृष्टि केवी जगृत २ वी जेहु ते माटे अनावेता एक पह उपरथी आवी शक्षे, अने ते उपरथी २ तमारी गृहस्थ धारणे तेवें दूरदो शेगवी शक्षे, एम विचारी ते पह ० दांकी अतांवुं हे—

“पूजा विधि भांडे लाविचेलु, अंतरंग जे लाव ;

ते सवि तुझ आगांग कुंजुलु, साडेग सरल स्वभाव; सुहुँकर अवधारे प्रलु

दातापु करतां लाविचेलु, प्रलु शुश्रु जण मुख शुद्ध ;

उल जीतारी प्रभतवालु, हो मुज निर्मण शुद्ध. सुहुँकर० २

जताये स्नान करीलुएलु, काढो मेव भिथ्यात्व ;

अंगुष्ठे अंग शेषवीलु, जाणु हु अवदात. सुहुँकर० ३

क्षीराहकां धे तीयांलु, चितवो चित संतोष ;

अष्ट कर्म संवर लदेलु, आडपणे मुखडेश. सुहुँकर० ४

२५८

जीव धर्म प्रकाश

आश्वस्ति ओऽप्रताणु, केसर लहित उद्देश ; ग्रहा अंडन चित्तवोलु, व्यान चिपा रंगरील. भाष वहु आणु भवीलु, तिळक तेहु तेह भाव ; के आबरणु उतारिषेलु, ते उतारो परभाव.	मुहुङ्क२० ५
के निर्भीव्य उतारिषेलु, ते तो चित्त उपधि ; गणाव करतां चित्तवोलु, निर्भय चित्त समाधि. गांगलुहुणुं घर्गनांणु, आत्मस्वलक्षण के आंग ; के आबरणु घडेसारीषेलु, ते रत्नभाव निज आंग.	मुहुङ्क२० ६
के नव वाडपिशुद्धताणु, ते खूब नव आंग ; गांगाचार विशुद्धताणु, तेहु खूब गांगराग. दीये इतां चित्तवोलु, शानदीपहु सुप्रकाश ; नवचित्ता वृत्त खूरियुंलु, वरव भाव सुविचार.	मुहुङ्क२० ७
खूप दृप अति कार्यताणु, दृष्टिगढनो जेग ; शुद्ध वासना भहुमहेलु, ते तो अनुभव जेग. महस्यानांक अहु छांडवाणु, तेहु अहु भांगलिक ; के नैवेद निरिषेलु, ते मन निर्वेद ठीक.	मुहुङ्क२० ८
लवणु उतारी वालिवनेलु, नाह ते अनुहंह सार ; मांगज दीपो अनि लतोलु, शुद्ध धरम परलाग. जीत नृत्य वालिवनेलु, नाह ते अनुहंह सार ; समरनि रमणी के इरीलु, ते साचो श्रीधकार.	मुहुङ्क२० ९०
आव पूज योग साक्षीलु, सत्य जन्मयोरे घट ; विभुतन भाषे ते विस्तरेलु, याणे कमनो कंट. ओणी परे भावना भावताणु, सालेण जस सुप्रसन्न जन्म जक्कु जग तेहनेलु, तेहु सुरूप धन्व धन्व.	मुहुङ्क२० ९१
पदम सुरूप भक्ष शासणाणु, भानो ए सुज सेव ; दूर इसे जव आसणाणु, वाचकु जक्कु केहु देव.”	मुहुङ्क२० ९२
“	मुहुङ्क२० ९३
या यमाणु विवेदी गृह्यश्च प्रयुनी द्रव्य यूज करतां अंतरंग भावनी शुद्धिथी लेम अशुल इम तो क्षय करे हे, तेम अन्य संसारवद्वारमां उदासीन रहेनाथी यमुक रमनी अंध इस्तो नथो. आव जानी गृहस्थै पायु, अटप छागमां संसार- नो भाव इरे हे, अने कोई तो भद्राशय परिणामनी अत्यंत निशुद्धिथी नागकेतु- नी ऐरे ते भवतां योहुपद्मे प.से के. केना हुदयमहिमां विवेकीपक अगस्त्यो	मुहुङ्क२० ९४

ज्ञानसार यत्न स्पष्टीकरण.

८६६

छे तेने परमात्माना हर्षन थतां डेटवो प्रेम जगेछे, तेनुं कँहिक वर्णन उपाध्यायल्लाए
नीचेना एक पहासां करेदु छे. तेनुं भनन कर्नाने अन्य आत्माथीं जनेए पछु प्रभु
प्रथे अवेऽप्रेम जगावयो घटेछे. अबु प्रथे शुद्ध ग्रेमसाव जगाववाथी परपुर
गतिक वस्तुओमां अनाहि अविवेकयोजे अंधाचेतां रागाहि अंधन आगोआप
तूरी जाय छे, अने आपगा प्रखुना पुष्ट आल अनथी उपाधिजन्य सुणहुःअने हर
डरी, सहुज द्वालाविक आनंदमां भग्न थाय छे.

पह—दाण जोडी.

संलग्न किन (७४) नयन भिवयो हे.

प्रगटे पुष्टयेके अँकुर—तथयें हिन मोही सहल वद्यो हे;

अँगारे अभीये मेहु वुहा, जनग तापांडी व्याप गवयो हे.

सं० १

जैसी लक्षित तैसी प्रभुकृना, रवेल शाखमे हृषि भिवयो हे;

दर्शनयें नव निधि रिद्धि धाइ, हःअ दोहुग सभ हर टव्यो हे. सं० २

उत्त द्विराहे हृषिं द्वियें, मोहुमल्ल लिषु जगन लवयो हे;

अमहित रत्न लहुं दरिसनसें, अभ नवि जाउं कुगति रव्यो हे. सं० ३

रोह नजर लर निरथतही सुज, ग्रुषुं हेडो हेज छव्यो हे;

श्री नय विष्वय विष्वुध सेवकुङ्कु, साहेज सुरतदु छेय इव्यो हे. सं०४

आत्मामां सभता, सरलता अने नमाताहिक उत्तम गुण गीकाववाने लक्षित

ए एक घेयो अज्ञ अने सरल उपाय छे के तेनाथी कोई पछु प्रकारना अपायती
शांका विना निरंतर सहुज गुणनी वृद्धि थायग करे छे. लक्षितमां द्वालाविक रीते
नम्रात्मापूर्वक उत्तम प्रकारनी भावना अनी रहे छे: एवी शुद्ध भावनामय लक्षिती
अशुल वासनानो क्षय थाय छे, अने शुल वासना सहेजे प्रगटे छे. लक्षिती सुन-
क्षम अने सर्वपुन्नुलूति साधुनी पेरे आत्मा आराधक भावने पामे छे. साधक पुर-
योगे तो जान डरतां पछु लक्षित साधन तरीके उत्तम गरज सारे छे. शुद्ध भावना-
मय लक्षिती आत्माना सहुज गुणनो विकास थाय छे, अने होप मावनो क्षय थाय
छे. जानथी तो उचित् मह पछु संलग्ने छे, पछु लक्षितमां महनो संलग्न नथी;
अधवा शुद्ध लक्षित एज तरवयी जान इर्शन अने चारिन छे. श्रीमह उपाध्याय-
लुओ पछु शांतिनाथ ग्रुषुना स्तवनमां कहुं छे के—

“ ताहुरं ध्यान ने समक्षित रूप, तेहुज शान ने चारित्र तेहुचेल; तेहुथी जो
सधगां हो पाप, ध्याता ध्येय स्वदृप होये पठील. धन्य हिन वेगा धन्य धी तेह;
अचिरानो नंदन जिन यहि लेश्युल. ”

गने तेवा प्रसंगे साधुने के गृहस्थने आत्मकद्वयाखुने माटे वारंवार लक्षपू-
र्वक विचारकुं योग्य छे के सत्ताच्ये अनंत गुणना द्वाभी योवा सिद्ध भग्नान

समाज छतां भारे संसारमां तेम प्रमणु करवु यडे छे? अनंत ज्ञान-हर्षन शुणु
यातामां छतां एक आज्ञा अथवा अध्यनी पेरे मारे तेम सुंगालुं पडे छे? अनंत चा-
टप्र साव छतां भारे शामाटे तुळच विषयगुणनी तृष्णु अने ते भाटे तीन-अ-
न्यनी गेडे हीनता करवी पडे हो? अने अनंत शक्तिनो अधिकारी छतां निर्णय
अशक्त अने लालातनी पेरे मारे शामाटे पारवी आशीर्याणी भेगववी पडे हो?

एजी आत्मा अभूत्ता छतां भारे शामाटे विधविध इप धारवां पडे हो? आत्मा अ-
द्वर असर अने अक्षय छतां भारे शामाटे वासंवार जन्म जश अने भरणुने वश
यवुं पडे हो? आत्मा अगुडलवु छतां भारे शामाटे नीच उक्त गोत्र धारवां पडे
हो, अने आत्मा सहज गुणविकासी छतां भारे शामाटे पुढगलिक सुखनी आ-
पावी ईए अनिष्ट अयोग विदेशमां तनि असति धारवी पडे हो? सम्यग् ज्ञान-ह-
नीयुक्त विदेशी आत्मा आती रीते समलु शके हो ते निर्णय छटिक रत्ननी वे-
दुं आत्मानुं त्वाकाविक त्वदृप शुद्ध छतां अनादि उर्म-उपाधिवडे आत्मानुं सह-
ज त्वदृप संतहित थै-अवराई जध, विभाविक इपने धारणु करे हो, तेथीज तेनी
आ दशा अने हो; परंतु एम समज्या बाढ प्रमाणी थहने बेची रहेवुं जेहतुं न-
ही. एम अगाह तणाने सावधानघो सर्वज्ञ लागवाने उर्म-उपाधिने द्वार करवाने
करप्र दर्शन, सत अने चारित्र इप वे के साधन कठां हो तेने यथाविधि सेव
पामां आये तो अवश्य आत्मा अतुक्तमे अवय कणमांज पोताना अवराई
वयेशा सहज शुद्ध त्वलाप्तने आप करी अपड परमानंद सुखने पाभी शके.
आती अध्यात्म दृष्टि जेने लागी होते महाशय दिवसे अने राने, सुतां अने
ब्लगतां, वनमां अने वसतिसां, एटला ते समुदायमां समानभावावधी त्व समीहित
झाले साधी शके हो, येवी समताने सेवनार साधु सम्यग्ज्ञान, सम्यग्हर्षन, स-
म्यद्वयित्वदृप रत्ननीतीं आशाधन करवाने अछानिय उज्जमाणज रहेहो. एम
तेवजिहु ज्ञानाशयमां चेतरइ पासरी वय हो तेम समतावांत साधुनां ज्ञानहर्षन
सर्वज्ञ विज्ञानने पाभी शके हो. हुंक जेम भानस सरोवरमां भग्म थध रहे हो, तेम
तेवा समतावांत साधु पाणु शुद्ध चारित्रमांज भग्म थध रहे हो. जेन हुंस क्षीर जेवा
मिष्ट गजतुंज धान करे हो, बाढीना गांडा जग्नो व्याग करे हो, तेम समताभावी
साधुरक्तीं पाणु सहगुण भाननुंज आढळु करे हो, अने होय भाननी उपेक्षा करे हो.
येवा आत्माशासी साधुने के अनुशवदसनों आस्वाद मणे हो, ते समता विना गमे
तुवी थध करणी उनाने कठापि भणी शक्तोज नधी. आवा समताभावी साधुने
अवय ज्ञान पाणु अहु ज्ञाननी गरल सारे हो. एम भान्तुपुं मुनि 'मारुप मातुप'
डोऱ्ह उपर दोय उर्मो नहि तेम डोऱ्ह उपर राग करवो नाहुं एटला पाणु स-
म्यग्ज्ञानना अवज्ञाधवडे उत्तम भक्तानी सेवी शिवसुखना लागी थया,

तेम वितांगर था हिंगभर भुद के गमे ते सभतावडे अवस्थ मोक्षना अधिकारी थई शक्ते. आत्मामां ऐवी सुणदयो समता आवी छे के नहि, तेनी लुचन अद्वर्दे प्रतीति थई शुक्रे छे. ज्ञ अद्व अवसरे गरजसुकमाण, चेतार्थ मुनि, अवंतिसुकुमाण, दृष्टमहारी, विलातीपुन, अधक मुनि, सुकेशल मुनि अने क्षंदक सूरिना ५०० शिष्योनी ये आत्मा सर्व परसावने छाई निज स्वालावमांज अडग रहे, क्षेत्र उपर लवदेश चण राग देष न करे, तो ते समता रसमां भग्न थये. क्षेत्रावध ऐवी सहज समताने सेवनार शुद्ध चारिवात्र सावु पुड्योअ मोक्षना घरा अधिकारी छे. मुनिना मुष्टिज्ञाननुं कंधक स्वरूप अतावीने युनः हेतु युक्तिवडे सम्यग् ज्ञाननुं महात्म्य शास्त्रकार कहे छे—

अस्ति चेद् ग्रंथिच्छिद्गुणं, किं चिरस्तंत्रयंत्रणः ।

प्रदीपाः क्वोपयुज्यते, तपोन्नीद्विष्टिवचेत् ॥ ६ ॥

आवार्थ—ज्ञ भिष्यात्वरूपी गांठने लेही नांखनारुं सम्यग्ज्ञान प्रगट थयुं तो पधी लिख शास्त्र ज्ञानावाना परिश्रमवडे शुं? ज्ञ द्वालाविक रीतेज अध्यारने नाश करनारां चक्रु प्राप्त थयां होय तो पधी कृत्रिम हीपक करवानुं प्रयोजन शुं?

विवरण्—ज्ञ रागद्रेष्यमय भिष्यात्वमे हनी निभिट गांठने तोडवावाणुं सम्यग् दर्शन-ज्ञान प्रगट थाय तो लिख लिख शास्त्रामां परिश्रम करवानुं विशेष प्रयोजन नहि. केमके शास्त्रपरिश्रमरडे के प्राप्ताय हुं ते नो प्राप्त थर्जन गयुं छे. शास्त्रपरिश्रम करवानुं सुख्य प्रयोजन वस्तुतरवने द्वुट रीते जावी तेनी सारी रीते प्रतीति करवानुं होय छे, ते ज्ञ तत्वज्ञान अने तत्त्वदर्शनवडे ज्ञिद्ध थई चुक्क्युं होय तो पधी जुहां जुहां भतमतांतरीय शाश्वा ज्ञेवानुं, तेमां वधारे परिश्रम लेवानुं विशेष प्रयोजन शुं? गमे ते रीते स्वतः के परतः सम्यग् ज्ञान-दर्शननो लाल थयो होय तो पधी शास्त्रपरिश्रमनी विशेष गरज रहेती नथी. केमके ज्ञ शास्त्रपरिश्रमथी करवानुं के पामतानुं छे ते सम्यग् ज्ञानदर्शनवडे ज्ञ करी के पामी शक्तय छे. ज्ञ अध्यारने सहजमां हूर करी नांगे ऐवी दृष्टिज द्वालाविक रीते प्राप्त थई होय तो अनेक उपाधियुक्त दृष्टिम हीवा करवानुं काम शुं? कंधक नहि. केमके ज्ञ अध्यारने उपाधियुक्त दृष्टिम हीवा करवाथी टेणेछे ते अध्यारने द्वालाविक रीते प्राप्त थयेकीहिय दृष्टिज हूर करी शक्ते. देवताओने तेमज सातिशय ज्ञानी पुड्योने ऐवी हिव चक्रु द्वालाविक रीतेज प्रगटे छे. पधी तेमने अध्यारन हूर करवाने अने तेजमय प्रकाश प्राप्त करवाने दृष्टिम ऐवा द्रव्य हीपकी कंध पछु अपेक्षा रहेती नथी. देवताने अवधि ज्ञानरूप हिव चक्रु अने शेष सातिशय ज्ञानीने पछु ज्ञानरूप हिव चक्रु द्वालाविक रीतेज प्रगटे छे. ज्ञानरूप हिव चक्रु अंतरंग चक्रु पछु कहे छे. तेथी

३५२

जैन धर्म प्रकाश.

अंतरात्मामां स्वाक्षराविक प्रकाश थઈ रहे हैं; पछी तेने बाह्य एवा दृग्निम् दीपक ना प्रकाशती उंडी गरज रहेतीर नथी. आत्मा अंतर प्रकाशती आत्माना स्वाक्षरावि-
क शुणु होपतुं सारी रीते लान थाय है. तेथी अंतर आत्मा विवेकयी अनाहि राग देव अने मेहाहिक होपाने दूर करवा अने सम्यग् ज्ञानदर्शन उप हित्य चक्रवर्ते
आए करवा योग्य निर्भूति चारित्रयुशुने समता पूर्णक सेवनाने सावधान थाय है.
प्रथम प्राचलभान्न ते, रागदेपमय निर्भृत (आठरी) एवी मिथ्यात्वमेहाहनी गांडने
अपूर्व विर्योद्दासयुक्ता तीक्ष्ण परिणामनी धाराथी तोडीने पछी अनुकमे हेघाहि
उपर्य-मेहाहनीय अने हास्याहिक नोडापाय-मेहाहनीयने क्षय-उपशम करवाने प्रवृत्त
थाय है; वेम वेम ते पाति उर्भनो क्षय-उपशम थोग जाय है, तेम तेम अनागत
रहेता पण अंतर्हित थयेता (अवराई जयेता) आत्माना सहज स्वाक्षराविक शुण्डा
अगत थता जाय है. वेम वाहणांथी उंडाई गयेतो सूर्य के चंद्रमा, वाहणां वेराई
गया पछी जेवा नेतेवा प्रकाशित थाय है, तेम उर्भ-आवरण्यथी अवराई जयेतो
आत्मा, उर्भ आवरण्य दूर थथा आट पोताना स्वाक्षराविक ज्ञानाहिक शुण्डनी जयेतिथी
स्वतः प्रकाशमान थाय है. एम अनुकमे प्रबोध पुरुषाय योगे सर्व कर्म आवरण्यनो
समर्था क्षय थवाथी आत्माना शुद्ध अण्ड अनांत सान दर्शन चरित अने वीर्यो-
हिक शुण्डा पूर्ण रीत्या प्रकाशे हैं, परंतु करण्य विना कायं कहाहि अनन्तुं नथी, एम
समर्थ आत्मार्थी ज्ञेये उर्भ आवरण्यने दूर करवा सम्यग् ज्ञान, दर्शन अने चा-
रित्रुप रत्नवर्यीनुं आराधन करवा थयाशक्ति उघम करवा चूक्लुं नहि. मोक्ष-
मार्ग पामवानी एज खेड़परी कुची है. हवे रत्नवर्यीनुं आराधन करवाने उज-
माण थयेता मुमुक्षुओने डेलुं सुख हे तेनुं उंडीक स्वरुप प्रतिपादन करवाने शा-
शक्तार कहे हैं—

मिथ्यात्वर्वालपक्षविद्—ङ्गानदंतोऽविशोऽन्नितः ।

निर्जयः शक्रवद्योगी, नंदत्वानंदनंदने ॥ ४ ॥

लाप्तार्थ—मिथ्यात्व उपर्य भृती पांण छेहवाने समर्थ एवा सान उप
वनथी शेलित योगी उंड्रनी परे निर्विध छता समाधिरूपी नंहनवनमां सुणे वि-
कास करे हैं.

विवरण्य—महा महीन वासना-एुद्दिने पेहा करनार गविनिवेशाहिज्ञय
मिथ्यात्वने गृणधी नाथा करवाने समर्थ एवा सम्यग् ज्ञान-दर्शनवर्ते शेलित
उनि उंड्रनी परे निर्विध छता समाधी-शवानी साथे सहज समाधि वनमां सुणे
होइ करे हैं. लासाधि शतकमां उपाद्यायु महाराजे एज वातनुं समर्थन
कर्म है.

જ્ઞાનસાર સૂત્ર રષ્યુદ્ધકશણ.

૬૩૩

“ જ્ઞાન વિમાન ચદ્રિ પવિ, નંદન સહજ સમાધ;
સુનિ સુરપતિ સમતા શાચી, રંગે રમે આગાધ.”

“ જેને સમ્યગ્ જ્ઞાન રૂપ વિશાળું વિમાન (વાહન) છે, અને નિર્મણ આચાર વિચાર રૂપ વજા મોહાદિક કર્મવર્ગને વિહારવા સમર્થ સાધનભૂત છે, અને ઉત્તમ પ્રકારની સમતા રૂપી ઈદ્રાણી જેને ઉત્સંગમાં સદા વિદ્યમાન છે એવા યોગીશ્વર સુનિ ઈદ્રની પેરે નિરાખાધપણે સહજ સમાધિસુખ રૂપ નંદનવનમાં અહુનિશ આનંદ કરે છે.”

એવા ચોણી પુરુષનું ડિચિત સ્વરૂપ શ્રી પદ્મવિજયશ્રુત મહારાજ નવપદલુની પૂજામાં ‘ ઉપાધ્યાય ’ પદની સ્તુતિ કરતાં કહેછે:—

દુઃખ।

“ ચોણે પદ પાઠક નસું, સર્કણ સંઘ આધાર;
ભણે ભણું વે સાધુને, સમતા રસ લંડાર.” ૧

દાણ—રાગ વસંત.

“તું તો પાઠક પડ મન ધરહો, રંગીલે લુઝરાં એ ટેક,

રાય રંક જસુ નિકટે આવે, પણ જસ નહિં નિજ ધરહો.

રંગીલું

સારથુદિક ગંધમાંણ કરતા, પણ રમતા નિજ ધરહો.

રંગીલું ૨

દ્વાદશાંગ સાધાય કરણુંક, જે નિશાદિન તત્પર હો.

રંગીલું ૩

એ ઉવાયનિર્યામક પામી, તું તો જવસાધર સુષેષારહો.

રંગીલું ૪

જે પરવાહી મતંગજકેરો, ન ધરે હસ્તિપરે ઉરહો.

રંગીલું ૫

ઉત્તમ શુરૂ પદ્યમ સેવનથે, પકડે શિવવધૂ કરહો.

રંગીલું ૬

સમ્યગ્ જ્ઞાન દર્શનના ચોણે વસ્તુસ્વરૂપને યથાર્થ જાળી—નિર્ધિરિને જેણે
પરસ્પૃહાને કેવળ હુંઘાયી જાળીને પરિહસી છે એવા ચોણી પુરુષને સ્વાભાવિક
રીતેજ રાખરંકમાં લેદ રહેજ નહિં. એવા સંતપુરુષની સમીપે જે કોઈ લંઘ
આવે તે લેદસાવરહિત કલ્યાણુને માર્ગ પામી શકે. ક્રકાન આવનારની ભુદ્ધિ કલ્યાણ
સાધવાની હોણી જેઠાં એવી શુદ્ધ ભુદ્ધિથી રાજ કે રંક આવે તો તે બને
તેમની પાસેથી સંતોષ પામીને જ જાય એમાં કંઈ શક નથી. જેમ ઈંગ્રેઝીતાના
પરિવારનું સારી રીતે પાલન કરેછે તેમ ગંધનાયક પણ પોતાની પાસે વસનાર
સાધુસમુદ્ધાયની સારી રીતે સારથુદિકવડે સંભાળ રાણે છે, તેમની ઉપેક્ષા, કરતા
નથી; છતાં પોતાની સહજ સમાધિમાં આંચ્છા આવવા હેતા નથી. જેનીસમીપ નિર-
રંગ શાસ્ત્ર અધ્યયન સંણાધી પડન પાડન રૂપ નંદી વોષ થયાજ કરે છે એવા સમર્થ
સાધુ પુરુષનું શુદ્ધ અદ્વાર્પૂર્વક આલાંથન દેનારને પણ જન્મમશણુનો કશો ભય દ-

દુદો રહી, એમ દૂભળુને અનેડ આત્મસારીં ચાંપું અને શ્રાવક જનો આત્મકદ્વારાખુને જારે આવા સમયે યોગીનું શરણ હોછે.

સ્વપ્રદ સમયના જાણ એવા સમતાબાવી યોગીધર કોઈ પણ પરવાદીનો કંઈ રહ્યું લય રાગતો નથી. સમતાપૂર્વક સર્વ કોઈનું સતોષકારક સમાધાન કરી શકે છે, રહિતસ્વીના પ્રલાવથી શાસનની અનેડ પ્રકારે પ્રલાવના કરે છે, અને એમ કરી રહારનું એડાંત હિત સાધતાં અતે અવિનાશી એવા મોક્ષપદ્ધને પામે છે. ઉત્તમ પ્રલાવના સમતાલય શાંતરસમાં નિમામ યોગીધરો જે સહજ સ્વાભાવિક સુખને જાગાયું અનુભૂતે તેનો જ્યાલ સરખો ગણું સમતારહિતએવા પામર પ્રાણીએને કર્યાયી જાવે છે એવી શાંત સુખદીયી સમતાને પેદા ઉનાર અને પુછિ કરનાર સમ્યુદ્ધ જીવનનીએ રહુતિ ઉરતા થડા શાસ્કાર કરે છે—

પીપુષ્પમસમુર્જોત્થ, રસાયનમનૌપદં ।

અનન્યાપૈક્રમૈચર્ય, જ્ઞાનમાહૃર્મનીપિણઃ ॥૫॥

લાલાર્થ—જીન એ સમુદ્રથી નહિ ઉત્પન્ન થયેલું એવું અપૂર્વ અમૃત છે, જીન વૈલાલાર્થી નહિ ઉપનેલું એવું અપૂર્વ રસાયણ છે અને અન્ય વસ્તુઓની જીવિકા નિતાનું અપૂર્વ અંશર્થ છે એમ શાસકરો કરે છે.

લિલારણુ—જીનજ ખરું અમૃત, જીનજ ખરું રસાયણ અને જીનજ ખરું અંશર્થ છે, એમ અનુભાવી પુરુષોનું કથન છે રેત્યાજાણી છે. ડેમકે અન્ય અમૃત, રસાયણ અને કંઈથર્થ કુદ્રાજ કલિપત છે. કલેવાય છે કે અનુભરું અથળ કરીને ટેવતાએવે અમૃત પ્રાપ્ત છું, અને શાકરે વિષ પ્રાપ્ત કરું. કેટલાક જીવધના સંદેશે મારેતી ધાતુ વિગેરની જાતાને રસાયણ કંહેવામાં આવે છે, તેમજ હુનિયમાની કેટલીક વસ્તુઓનો સંચોગ થતાં તેને કંઈથર્થ કંહેવામાં આવે છે. થોડા હાથી, થોડા, રથ, પાળા અને શહેર કલાજા વિગેર પુરુલિક વસ્તુનું સ્વામીપણું પાસ થયે સતે તેને સહજ સ્વાભાવિક જુખાના આવણ કોણે કંઈથર્થ કરીને આપાવે છે; પરંતુ તે સર્વ કલિપત હંઘાથી કંઈનું એવા કૃતિમસુખનાંનું સાધન છે. હેઠાતા હેઠાતામાં તે સર્વ હુતા થઈ જય દેતેથી તત્ત્વજ્ઞાની પુરુષો તેવા કંઈનું અને કલિપત સુખના સાધનભૂત અમૃત, રસાયણ રહ્યું હશે અંશર્થને તત્ત્વથી અમૃત, રસાયણ અને અંશર્થ ભાનતાજ નથી. ખરું અમૃત દેને તેથે તેનેકે જાને કે કેવેનું સેવન કરવાથી આત્મા અજરામરગણું જાણે, કેટલે જન્મ જન્મ અને ભરણના હુણાથી સર્વથા સુદ્રા થધ પરમ નિવૃત્તિ કુશને પ્રાપ્ત કરી શકે. સર્વ ઉપાધિથી સુજા થઈ શાકત એવું નિરૂપાધિક કુશ જાગી રહે, જાની પુરુષો ખરું રસાયણ તેનેજ ભાને છે કે કેવેનું સેવન કર્યો જાણ પ્રાપ્તિ કર્મજીવ નંદજ નહિ, રાગ દેય જાને માદાહિ વિડાર પ્રલબેજ નહિ અને આ-

એક ઐતિહાસિક પ્રશ્ન.

૨૩૫

તમામાં સહજ ઉત્તરમ પ્રકારની પુછ્યા થાય; નેથી તેની કરાપિ અધોગતિ તો થાયન
તણ્ઠિ. ખરું ઔદ્ઘર્ય પણ અનુભવી પુરુષો રેનેજ માને છે કે નેની ઉપર દુનિયાથાં
કોઈનું સ્વામીપણું સંલગેજ નહિ અને કોઈની પાસે હીનતા દાખલવાની પડેજ નહિ.
એવું ઓડાતિક અને આલાંટિક ક્રતાંત્ર સુખ સદાને માટે પ્રાસ થવા માટેજ સર્વ
પ્રયત્ન કરવા ચોગ્ય છે. તત્ત્વથી વિચારતાં આવું અનુપમ અમૃત, આવું અપૂર્વ ૨-
સાયણું અને આવું અભિનવ ગૈધર્યં તે સમ્યગ્જ્ઞાન ડ્રેપન છે, નેથી સમતાશુદ્ધાની
પ્રાસિ અને પુછ્યા થાય છે, નેથી નિર્દોષ એવા ચારિનમાં રતિ થાય છે, અને અનુક્રમ
એ રતનગથીતું આરાધન કરતાં પ્રથળ પુરુષાર્થીઓ સર્વ ક્રમ-ઉપાધિનો સર્વથા
અંત થવાથી સહેજે નિર્દ્દ્રાધિક એવું શિવસુખ પ્રાસ ધર્ય શકે છે. આવું અનુપમ,
અમૃત, અપૂર્વ રસાયણ અને અભિનવ ગૈધર્યં તળુને કોણું તત્ત્વદ્વારા જનકલિપત
અમૃત, રસાયણ કે ઔદ્ઘર્યને માટે ક્ષણિક સુખની લાતસાએ ઉદ્મ કરે? શાંત,
સુખદાયી અને સમતાકારી સમ્યગ્જ્ઞાનમાંજ સર્વ કોઈ કલ્યાણાર્થી જનોની શુદ્ધ
પ્રેમપૂર્વક પ્રવૃત્તિ થાએઓ! મુક્તિપુરીનો એજ પોરી માર્ગ છે.

—૪૪૩—

શ્રી ઉપહેશમાલાના પ્રણેતા શ્રીમાન ધર્મદાસગણિ શ્રીમહાવાણીન
દ્વારા લસ્તદીક્ષિત શિષ્ય હતા?

એક ઐતિહાસિક પ્રશ્ન.

(૪૦—મનઃકુલ વિજ કીરતસ્થાન મહેતા-સોરણી.)

શ્રી ઉપહેશમાલા એક અમૂલ્ય ચરણનું યોગમુખ ચંચ છે. તેના પ્રણેતા

શ્રીમાન ધર્મદાસગણિ વિદ્વાન શાંત અને સાધુ વર્ગમાં સુખ
પ્રદત્તાવના.

રિચિત છે. એ અમૂલ્ય સત્ત્વસુત્તનું માંચન-મનન હું કરતો હતો, ત્યા
તેના કર્તાપુરુષના ધર્તિવૃત્તાની મને લુગાસા થઈ. હરકોઈ અથનું અદ્વોકત કરત
તેના ગુંથનાર વિષે વાચકવર્ગને લુગાસા થાય એ સ્વાભાવિક છે: તથાપિ ખૂર્ચાચ
ચોના ધર્તિહાસ સંખ્યાધી આપણી લુગાસા પુરી પે એવાં સાધનો આપણું ઉપ
લખ નથી થતાં, એ આપણું કમત્તીની છે. શ્રી ધર્મદાસગણિના ધર્તિહાસ સંખ્ય
ધમાં પણ આપણે મેનત્તીન રહીએ એમ છે. શ્રી ઉપહેશમાલા ઉપર એક કરતાં વ
ધારે સનિસ્તર ટીજા-વૃત્તિ વિદાન પુરુષોએ રચ્યો છે, તથાપિ તે ઉપરથી પણ શ્રી
ધર્મદાસગણિ સંખ્યાધી આપણી લુગાસા પરિતૃપ્ત થાય, એવું ઓછું હીસે છે. મા:

જાણે આ ટીકાએ નથી, એટલે આ સંબંધમાં મારાથી કંઈ ચાઢસ કહી શકાય હોય નથી; મારું તો આ એક અનુમાન છે; તે ખરું પડે કે જોઈએ પડે. પ્રભુકૃપાએ કે યાનુમાન જોઈએ પડે, અને શ્રીમાન્તા સંબંધમાં સવિસ્તર રીકા ઉપરથી સવિસ્તર જાણુન્નાનું આપણું મળો.

દું કે વાચતો-વિચારતો હુંતો તે શ્રી જિનદાને પ્રસિદ્ધ કરેલી (સં. ૧૬૩૪)

બાલાવાન્દ્યવાળી ઉપદેશમાણા છે. તેનાખર નીચે પ્રમાણે ટીકાએ ઉપદેશમાણા ઉપરની રીકા ને અવન્દૂર્ધિઓ લગાણી છે.

૧ શ્રી જ્યયસિંહસૂરિકૃત વૃત્તિ, પ્રાકૃત. વિં સં. ૯૧૩

૨ શ્રી ઉપમિતિસવપ્રયંચના કર્તા શ્રીમાન. જિદ્ધર્બિંદી રીતે હેયોપાહેયા વૃત્તિ. વિં સેકો હથમે.

૩ શ્રી સિદ્ધપિંડિત લઘુવૃત્તિ.

૪ શ્રી ઉપદેશમાણા કથા. શ્રી જિનભસ્રસૂરિકૃત. વિં સં. ૧૨૦૪

૫ શ્રી રૂલપ્રલસૂરિકૃત હોઘદી વૃત્તિ. વિં સં. ૧૨૩૮

૬ શ્રી ઉદ્યમલસૂરિકૃત કંઠિંદુકા વૃત્તિ. વિં સં. ૧૨૬૬.

૭ શ્રી સર્વાનંહસૂરિકૃત વિવરણ. પંડરમા સિકાના પ્રારંભમાં.

૮ શ્રી સોમસોલાગ્ય કાળ્યના નાયક શ્રી સોમસુંદરસૂરિકૃત વૃત્તિ. વિં સં. ૪૪૩૦-૧૪૬૬.

૯ શ્રી જ્યયશોષરસૂરિકૃત અવન્દૂર્ધિ. પંડરમા રીકા.

૧૦ શ્રી અમરચંદ્રસૂરિકૃત અવન્દૂર્ધિ. વિં સં. ૧૫૧૮.

૧૧ શ્રીસત્યવિજય પંન્યાસના મુખ્ય શિષ્ય શ્રી વૃદ્ધિવિજયજીકૃત પદ્ધતિગુંડ. અદારમા રૈકાના જૂરોધિમાં.

૧૨ શ્રી રામવિજયગણિકૃત વૃત્તિ. વિં સં. ૧૭૮૧.

૧૩ શ્રી ધર્મનંહનકૃત અવન્દૂર્ધિ.

૧૪ શ્રી શત્રુધી (એક ગાધાના સા અર્થ).

આ પ્રથમર આટલી વૃત્તિએ ને અવન્દૂર્ધિએ લગાઈછે, એટલું મારી જાણું હોય છે; અને એ અધી ટીકાએ મળી શકતી જણ હશે; વળી મૂળ અંથતું મહત્વાની ગિતા જેતા એ પાર બીજું વિશેષ ટીકાએ ગણ્ય રીતે હોય જેકાં. શ્રી જિન કે જિનદાને કરેલી આવૃત્તિ વિં સં. ૧૬૩૪ની છે; તેની પ્રસ્તાવનામાં લખ્યું છે કે એ પારથેની રીકા બનેલીની, પણ ટીકાથી આપણાને એધથ્યે દુર્લભાને, એવું જાણુંને

ગુરુ શ્રીતિવાસિક પ્રકાશ

૧૫૭

અવયળુંયોના ઉપકારને અર્થે ટીકા તથા ઘીનાં સિદ્ધાંતને અતુસારે તેનો બાલાચ-
ષેખ.....કર્ણો છે. ૬૦ ” આમ જેતાં આ ટીકાઓ અધી મળી શકતી હેઠળી જ્ઞાનએ.
શ્રી જિનદાસ કઈ ટીકાને અંગે ધસારી કરે છે, એ આપણે જાણું નથી; તથાપિ એ
ટીકાઓ લખ છે, એમ તો ખર્દાં શ્રીયુતુ મેતીયંદ ગિર્વસ્તલાંદ કાપડીયાના કહેવા
મુજબ એ વૃત્તિઓ લખ છે, અને એ લાત અમદાવાદ વિગેરના લાંદારમાં છે. તો
એ ટીકાઓ વિગેર ઉપરથી શ્રીમાન ધર્મદાસગણિના ધર્મદાસ સંબંધી કોઈ સુજ
આદ્ધ કે શ્રમણ પ્રકાશ પાડશે, તો મહદૂ ઉપકાર થશે.

આદાલા ઉપેદ્ધાત પદ્ધી હું આ દેખના વિરોભાગમાં મુકેલ પ્રકાશ ઉપર
ગ્રન અને તેનું આવું છું. મને એવો પ્રકાશ થાય છે કે “ શ્રીમાન ધર્મદાસગણિ
કારણું ” શ્રી મહાવીરદેવના હસ્તાક્ષિત શિષ્ય હતા? ” આ પ્રકાશ ઉદ્ભવવા-
તું કારણું કે મને એવો જ્યાલ એવી ગયેવો હતો કે શ્રી ધર્મદા-

સણું શ્રી મહાવીરસ્વામીના હસ્તાક્ષિત શિષ્ય હતા; પણ મૂળ થાંથમાંજ એવો એ-
તિદાસિક સૂચ્યક લાગ (Historical allusions) આવેછે કે એ જ્યાલ ધડીભર પણ ન
ટકે. એ જ્યાલ જે મારીજ એટલે મને અંગત સહેલે ઉલો થયેલો હોય, તો તો એ જ્યા-
લને દૂર કરી મૂળ થાંથપરથી સૂચિત થતા સત્ય લાણી વળતું યોગ્ય છે; પણ એમ નથી.
મારા એ જ્યાલને વિદ્ધાનો તરફથી પુછિ મળે છે, એટલે એ જ્યાલ દૂર કરી શકું
એમ નથી. જ્યાલ એ પૂર્વનો સંસ્કાર છે, અને એ સંસ્કાર પૂર્વ કાંઈ વાંચ્યું-સાંસ-
એનું-ગુનું હોય તેથી પરી જાય છે. એ જ્યાલ-સંસ્કાર સાચ્યાજ હોવો જરૂરએ
એમ કાંઈ નથી; તે જોડો પણ હોય ; અને કારણ્યોગ પામી એ
‘જ્યાલ એટસે શું? ’ દૂર પણ થઈ શકે. શું વાંચ્યાથી અને કયાંથી શું સાંલજ્યાથી મને
શેનું કારણું ?

પ્રસ્તુત જ્યાલ થયો, એ હું ચોક્સ કાઢી શકતો નથી; પણ વાંચ્યા-સાં-
સણ્યાથી એ જ્યાલ થયેલ, એ તો ખર્દાંજ. આ વિષય નાંચનારમાંના વણુનાં મનમાં
કાદાચ એ જ્યાલ હોય. જે વિદ્ધાનોના વિચારો હું નીચે મારા એ જ્યાલની પુછિયે
ટાંકું છું, તેમાંના કોઈના વિચારને લઈ એ જ્યાલ મને બેઠો હોય; અને એમ છ-
તાં જ્યાલનું મૂળ કારણું હું વિસરી ગયો હોડ. કારણું કે થાણીવાર એવું અને છે કે કાંઈ
મણ્ણની આખત પણ આપણે કોઈ પુરુષ કે અથડીશીઓઓ આગળ વધીએ, ત્યાર પણ
તે નણ્ણની આખત શીખવાના કારણું તે પુરુષ કે તે અથને આપણે એટલી હુદ
મુદ્દી વિસરી જરૂરએ છીએ, કે જાણું આપણે તો એ આખત સ્વયમેબ-પોતાની મેળે
(સ્વયંસુક્રદૈયે ?) શીખના ન હુદ્દાએ એવું થાય છે. ઝાન-યુર્દુ યોગવા રૂપ આ
દ્વારા અરો કે નહિયે? પ્રલુબ આપણું એ હોયથી બચાવો ! એ ગમે તેમ હોય, હું અને
વિદ્ધાનોના મત નીચે મુજબ ટાંકું છું--

(१) श्री जिनदसे प्रसिद्ध करेली सं. १९३४ नी आवुत्तिनी प्रस्तावनामां आ वर्षासह कथि लग्यु छे के:—“ चोवीशमा तीर्थिकर श्री महावीर स्वामीना शिर्मिति विवरण गिर्या श्री धर्मदासगिरि अवधिज्ञानी.....देखेहु.....आ उप-दानोला भए। देशभाषा प्रकरणु रख्यु छे.”

(२) श्रीमद् आत्मारामल्ले रघेल श्री जैनधर्मविषयक प्रश्नोत्तरना उक्त गा प्रक्षना किरामां सूत्रसिद्धांत उपरांत घीनं प्रभागिक आगमरूपे गण्याता वर्णियामानां उटारांकनां नाम आप्यां छे, तेमां श्री उपदेशमाणानुं नाम पछु आप्यु छे, के नाम आपानां श्री आत्मारामल्ल लग्ये छे के:—“ और श्री महावीरबग-वानडा शिष्य श्री धर्मदासगिरि शमाश्रमण्युल्ली रसी हुइ उपदेशमाणा तथा हौँ ”

(३) श्रीमद् आत्मारामल्लना अशिष्य श्री बलबलविजयल हुँडकुडित-शिक्षामां (पृ. ४०) प्रभाष्युरूप गण्याता गूढीचारीना उटारांक थांयीनां नाम आपानां लग्ये छे के:—“ (२८) श्री महावीर लगवांतडा शिष्य चाढहुर्वधारी, तीन-गानडा धरता, श्री धर्मदासगिरि शमाश्रमण्युविरचित उपदेशमाणा। ”

(४) श्री जैनधर्म प्रकाश पु. १७ माना अंक ४ थामां पृष्ठ ७१-७२मां पुस्तकेणी पहेंचना विषयमां तेना विदान तंत्री श्रीयुत कुंवरल आणु हैल लग्ये छे के:— “ आमां धर्मदासगिरि ने वीरअलु पहेला थेवेला लग्ये छे, परंतु व्याप्ती तो श्री वोरप्रभुना हस्तहीक्षित शिष्य छे, ते हुईकृत श्री उपदेशमाणानी दी-कृता प्रारंभमान रूपैष जण्यावेल छे. ह० ”

(५) श्रीयुत मौतीचांद गिरधरलाई कायडीआ B. A., LL.B. (Solicitor), एमधेहु श्री जिन्दविष्णुवीत उपनिति लक्ष्यप्रभानी गोडिका (Introduction) तुं एक हुँक पछु यहु रसमय अने उपयोगी प्रस्तावना साथे लाखांतर कर्त्तु छे. ते प्रस्तावनामां श्री जिन्दविष्णुवीत द्वितीयो अगे लाखतां जण्यावे छे के:—“ वणी श्री महावीर स्वामीना हस्तहीक्षित शिष्य धर्मदासगिरि उपदेशमाला अथ रख्यो छे, तेना एव सिद्धविष्णुवीत यीका लागी छे. ह० ”

आपडी वात तो मारा (?) ज्यावना टेका रूपे थहै; अधीतू श्री धर्मदासल श्री वीरना हस्तहीक्षित शिष्य हुता. पछु पहित हीरालाल दंस-श्री धर्मदासल श्री राज तो एथी पछु आगज वधीने जैन धर्मना आव्याहन ई-तिहासमां अडे छे के:—“ आ महान् साहु (श्री धर्मदासल) वीरप्रभुनी पछु पहेला थेवेला छे. ” लाइकी हीरालाललाई ! भने तो श्री धर्म-दासल वीर प्रभुना वामतमां धर्म गया के याही, ए सनाव उडेचो छे, तां एमच्या

શ્રી વીર પ્રભુ પણેલાં ધ્યાનેં તમારો ધ્યાલું (Theory) હું કેવી રીતે સ્વીકારી શકું ?

૨૩૬

શ્રી ધર્મદાસજી વીર પ્રભુના શિષ્ય હેલા સંખારી ઉપર ને જે પ્રથકું પ્રથકું
વિદ્યાનોના વિચાર ટાંક્યા, તે અધ્યા વિચારેનું મૂળ કારણ તે પ્ર-
થક જણુનેણા વિ-
દાનેના ભતનો આ. સ્તુત અંથની ટીકા હેલી જોઈએ. જેમ મને પ્રથકું પ્રથકું વિચારો
ધાર પણ ટીકા હો. વાંચ્યા-સાંભળ્યાથી ધ્યાલ રહેલો સંભળે છે, તેમ ઉપર જાણુંલા
વિદ્યાનોને પણ કર્ણોપકર્ણ ન્યાયે કે પરંપરાગત વાંચન-ધ્યાનુથી
કે છેવટ મૂળરાશિ ટીકાથી શ્રી ધર્મદાસગણું શ્રી ભડાવીર દેવના હસ્તદીક્ષિત શિષ્ય
હોલાનો ધ્યાલ રહ્યા હોય, એમ લાગે છે.

ટીકામાં શ્રી ધર્મદાસજી વીર પ્રભુના હસ્તદીક્ષિત શિષ્ય હોવાનું ગમે તે હેતુએ
ગમે તેમ લાખાનું હોય, પણ મૂળ અંથમાંના ઔતિહાસિક સૂચક
ટીકા અને ધર્મદાસજી વિલાગ (Allusions) જેતાં એ વાત કોઈ રીતે સિદ્ધ થતી નથી;
અર્થાતું શ્રી ધર્મદાસજી શ્રી વીર પ્રભુના હસ્તદીક્ષિત શિષ્ય નહોતા,
અને તેઓથી શ્રી વીર પ્રભુ પછી ધારણાં વરસે, અમુક ટીકા પછી થયેલા હેલા જો-
ઈએ, એવું સિદ્ધ થવા જાય છે.

શ્રી વીર લગ્નવાનતા સમય પણેલાંની હકીકત સંખારી દૃષ્ટાંત રૂપ ઈસરા પ્ર-
સ્તુત અંથમાં છે, એ તો જરાણર છે; કેમકે પોતાના વિદ્યમાનપણું
પોતાની દેયાતી પણ ધર્મદાર હદેક અંથકાર શાણ રૂપે આપી
ધી બનેલા બનાવેના આધાર હદેક અંથકાર શાણ રૂપે આપી
ની નોંધ લેખક લઈ શકે. જેમ શ્રી ઉપહેશમાલામાં કર્ત્તાપુરુષની ઘણા કાળ પૂર્વે થઈ
શકે ? પ્રશ્ન ? ગયેલાં શ્રી લરત, ધારુણ, ભરતિચિ, અંદ્રાખતસકરણ, અન્નિ-
કાસુગ, પુષ્પચુલા, આહિ સંખારી સ્તુત્યવન છે. પણ પોતાની હુ-
યાતી વખતે તથા તે પછી બનેલી વાતોને અંથકાર કેવી રીતે કહી શકે,
એ વિચારમાં પણ આવી શકતું નથી. ધારો કે પોતાના વિદ્યમાન-
પણુંના વખતની વાતો એક અંથકાર ઔતિહાસિક રીતે યથાર્થ કહી શકે, એ બનવા
જેગ છે; પણ પોતાની દેયાતી પછી જે વાતો બની, જે બનાવ થયા, તેનું નિરૂપણ
પોતે પોતાના હુંથે લખાતા અંથમાં કરી શકે. એ તો કેવળ અસંભવિત છે. છતાં
એમ કહેવામાં આવે તો (૧) કંતો એ અંથ બીજને હુંથે લખાયલોછેવો જેણુંએ,
અને (૨) કંતો અંથકાર પોતાના અંથમાં સ્તુત્યવેલ બનાવો થયા પછી થયેલા હોવા
જેણુંએ, એવા નિરાકરણું ઉપર આવણું જોઈએ. હા, બાવિકાળે આમ થશે, એ પ્ર-

૧ આ હકીકત વિષે તેમને લખતાં તેણે અયો જુલાસા કરે છે કે ‘ અમનો જન્મ વીર
પ્રભુની પણેલાં ધયો હતો એમ મારા વાંચનામાં આવેલ છે તેને આપણે માં એમ લખ્યું છે. બાદો
તેમણે દીક્ષા તો વીર પ્રભુ પાંચાજ લીધા છે.’ . તંત્રી.

એ પોતાના શાનથળે ચંદકાર નિરૂપી શકે; પણ આમ ધ્યુ' એ તો કેવી રીતે કહી અહંક ? જે શ્રી ધર્મદાસજીને આપણે શ્રી વીરમલુના હૃતકીલ્લિત શિષ્ય તરીકે રમના વારામાં થઈ ગયેદા ગણુંથે તે આપણુંને ઉપર જણાવેલી મુખ્યાંખું આવે છે. કેવડે ને પુરુષને શ્રી વીરલગ્વાનના વખતમાં વિદ્યગાન ગણવામાં આવતા હોય અને એ ગણુંની જે સાચી હોય તે તે પુરુષ પાતાની હૈયાતી પદી પાંચસો-છસો વરસે ઘયેલી બીનાનો ઈસારી પોતાના ચંદળાં કેવે પ્રમારે કરી શકે ? એથી કાંતો બીની દેખાતીના કાળની ગણુંની જેણી, અને કાંતો એ અથના એ કરીની હેઠાની મા-

ન્યતા હેઠાટી. પોતાના શાનથળે પાંચસો-છસો વરસે પદી થવાની ઉપરેશગળામાં શ્રી વાત સંખાંધી લાલિષ્ય વાળું રૂપે કહી શકે; પણ ' જેમ આના રસાનું કંઈએનું દાઢાંત. સંખાંધમાં આમ ધ્યુ' એવાં દૃષ્ટાંત રૂપે ? કેમ કહી શકે ? શ્રી ધર્મ-

દાસ ગણિએ ઉપરેશમાળામાં શુદ્ધની આજામાં થક કર્વી નહિ, શુદ્ધની આજા અમોદ છે, એને વિકદય કર્યો બિના માથે ચઢાવવી, એ આહિ ઉપરેશ ચંદળ શ્રી વળ રવારી અને સિંહચિનિનું દૃષ્ટાંત આપ્યું છે. આ વળ રવારી શ્રી વીર મલુનું પદી પાંચસો વરસે થયા છે. આમ જેતાં શ્રી ધર્મદાસજીના આપણે જાની લીધેદા હૈયાતીકાળનો સ્વાભાવિક પ્રશ્ન ઉઠે એમ છે; અને એથોશ્રી શ્રી વીરમલુના હૃતકીલ્લિત શિષ્ય હોવાનો જ્યારું બીજ સંખા આપારના અભાવે જે એમ છે.

અતાં આપણું ટીકાડારને અનુસરી એમ માનીએ કે શ્રી ધર્મદાસજી શ્રી વીર માટે અનુસરતા પલુના હૃતકીલ્લિત શિષ્ય હતા, અને એઓ એના વારામાં થયા, ઉપરેશા વિકર્ષણો. તો પદી, કાંતાઃ—

(૧) શ્રી ધર્મદાસજી પ્રસ્તુત ચંદળા કરી નહોંતા.

કાંતા (૨) જે ધર્મદાસજી હોવા જેઠાએ, એક શ્રી વીર ભગવાનના હૃતકીલ્લિત શિષ્ય અને બીજ શ્રી ઉપરેશમાલાના કરી.

કાંતા (૩) શ્રી વીરના હૃતકીલ્લિત શિષ્ય ધર્મદાસજીએ ર્થેત ઉપરેશમાલામાં શ્રી વીર પદી અનેદા જનાયોના સૂચ્યવન રૂપ ગાથાએઓ પાછળથી પ્રક્રિમ ઘયેલી હોવી જેઠાએ.

કાંતા (૪) આપણું અતિહાસિક માનિનતા હેઠવાની અને શ્રી ઉપરેશમાલામાં રૂચવેદ જે દૃષ્ટાંતને આપણે શ્રી વીર પદીથથા હોવાનું માનીએ છીએ તે શ્રી વીરના સમય પણું બન્યા હોવા જેઠાએ.

આવી કોઈ માનિનતા ઉપર આપણું આવયું પણનો, આપણું એ ચારે વિકદયાની પ્રશ્નાંસનના કહીએ.

એક ઐતિહાસિક પ્રશ્ન.

૨૪૨

(૧) શ્રી ધર્મદાસજી ઉપરેશમાળાના કર્તા નહોતા. એ વિકલ્પ નભી શકે એમ નથી; તેમકે અસ્તુત ત્રયંની છેવાડેની ગાથાએ (૫૩૭-૫૪૦) ૧ લેણ વિકલ્પ. પરથી સુપ્રતીત થાય છે કે ઉપરેશમાળાના કર્તા કોઈ ધર્મદાસ-ગણું કરીને છે.

“ધંતમણિદામસસિગણિણિહિપયપદમસ્વરાનિહાણેણ ।

ઉવએસમાદાપગરણ, મિણિમો રંધ્રાં હિયચાએ” ॥ ૫૩૭ ॥

અર્થાત्—ધાંત, ભણું, દામ, સસિ, ગણું, બિલિ એટલાં પદોના થણેલા અક્ષરો (ધ, મ, દા, સ, ગ, ણુ) વઠે જેનું નામ બને છે તે ખુર્દે એટલે ધર્મ-હાસગણુંએ આ ઉપરેશમાળાપ્રકરણું (સ્વપર) હૃત અર્થે રચ્યું છે. વળી—

“દ્ય ધર્મદાસગણિણા, જિયવયણુંવએસકજમાદાએ ।

માદં ચ વિવિહકુસુમા, કહિત્રા ઉ સુસિસવગસ્સ ” ॥૫૪૦॥

અર્થાત्—આ પ્રકારે શ્રી ધર્મદાસગણુંએ શ્રી નિજમયન ઉપરેશરૂપ પ્રુણે કરી આ માળા (ઉપરેશમાળા) રચ્યે; આ ઉપરેશમાળા વચનામૃતરૂપ વિવિધ ઉપરેશરૂપ કુલે કરી પુણ્યમાળા જેવી છે; અને સુશિષ્યવર્ગને એ આપી છે, ઈલાહિ.

આ એ ગાથા જેતાં શ્રી ઉપરેશમાળાના કર્તા ધર્મદાસજી નહોતા એ વિકલ્પ શરીર જય છે. હુંવે થીલે વિકલ્પ વિચારીએ.

(૨) ધર્મદાસજી એક કરતાં વધારે હતા; એ તો હતાજ. એક શ્રી વીરના

હુસ્તદીક્ષિત, ચૈદ પૂર્વધારી, અવધિસાની ધર્મદાસજી, અને થીલ રંને વિકલ્પ.. શ્રી વીર પણી છૂટા-સાતમા સૈકામાં થયેલા શ્રી ઉપરેશમાળાના કર્તા ધર્મદાસજી. આમ એ વ્યક્તિ માનવા રૂપ વિકલ્પ સાચો ઠરે તો અધ્યા વાંધો મરી જય છે; વિરોધ ટણી જય છે; ઈકા અને ઈતિહાસનો મતસેદ હૂર થાય છે, વિકાનો આ વિકલ્પ સ્વીકારે કે નહિ એ સવાલ છે.

કોઈ પ્રશ્ન કરે કે એક કરતાં વધારે વ્યક્તિરૂપ ધર્મદાસજી હોવાના વિકલ્પની શી જરૂર છે? શ્રી વીર પણી છૂટા-સાતમા સૈકામાં થયેલા ઉપરેશમાળાના કર્તા ધર્મદાસજીની વ્યક્તિ સ્વાક્ષરો એટલે બસ છે. આના ઉત્તરમાં કહેવાનું કે ઈકાકારે ઈકામાં શ્રી વીરના હુસ્તદીક્ષિત, અવધિસાની ધર્મદાસજી હોવાનું લખ્યું છે, તેમજ શ્રીમહ આત્મારામજી જેવા બદુનું પણ એમ જણાવે છે, એટલે એ વાત ખાટી ન હોય. એટલે શ્રી વીરના હુસ્તદીક્ષિત શિષ્ય ધર્મદાસ રૂપ એક વ્યક્તિ આપણે સ્વીકારીએ; પણ તેજ ધર્મદાસજીને શ્રી ઉપરેશમાળા, કે જેમાં શ્રી વીર પણી છૂટા સૈકામાં થયેલા વજાસનામી આહિનાં ઐતિહાસિક સૂચયન છે, તેના પ્રણોત્તા ગણીએ તો

અનુભિલાસિક દૃષ્ટિઓ મણોટા વિરોધ આવે, તે ટાળના પ્રસ્તુત બંધના પ્રણૂતા શ્રી વીર પદી છૂટુ-સાતમા સૈકામાં થયેલા ખીજ ધર્મદાસાલુ સ્વીકારીએ, તો વિરોધ માન છીએ જાય છે. વૃત્તિકારનું વૃત્તિમાંનું કથન સલ્ય હરે છે, અને અનુભિલાસિક સલ્યને બાધા આપતી નથી. બધી રીતે જોતાં મને આ વિકલ્પ અહુ બંધ ગેસે છે, તથાપિ ગીતાર્થનું વચન પ્રમાણું છે. હું આપણે ત્રીજે વિકલ્પ વિચારીએ:

(૩) ઉપદેશમાળા તો શ્રી વીરના શિષ્ય ધર્મદાસાલુએ રહ્યો છે; પણ તેમાં શ્રી વીરના વખત પદી બનેલી વાતોનાં સૂચયવન રૂપ ગાથાએ તું નં વિકલ્પ.

પાછળથી પ્રક્ષિપ્ત થયેલી છે. આ વિકલ્પ ટકી શકે એમ નથી. કેમકેનું

(અ) આજા બંધમાં લાપા, વૃત્ત, શૈલી અવલથી આખર સુધી એકજ ધાલાનાં છે. જે પાછળથી ગાથાએ ઉમેરવામાં આવી હોય તો લાપા, છંડ, શૈલીમાં પરંભી શકાય એવો લેદ માલમ પણેનું.

(ચા) વળી જે ગાથાએ પાછળથી નાંખી હોય તો ને કં તો આજળ, કંતો આધળ, કંતો મધ્યમાં નાંખી હોય: પણ જે ગાથાએ પાછળથી નાંખેલી હોવાનો કુશલ્ય ઉડવવામાં આવે છે તે તો દોમવિલોમ, એક અંદું તો બીજુ પણે એમ કુદક જણુંશે.

(દિ) વળી જે ગાથાએ પાછળથી નાંખવામાં આવે તો ચાલતા સૂત્રની વિપય સંગતિમાં ક્ષતિ આવે; ચાલુ વિપય તુટી જાય; પણ એ ગાથાએ તો ચાલતા વિપયના ગાર્થને અનુરૂપ છે.

(૫) વળી એવી ગાથાએ જે ઉમેરવામાં આવે તો એક, એ કે પાંચ ઉમેરવામાં આવે, પણ એકદમ વધારે તો ઉમેરવામાં ન આવે.

(એ) તેમ પ્રસ્તુત બંધમાં એવી ગાથાએ ઉમેરવાનું કાંઈ વિશિષ્ટ પ્રયોજન નથી.

આસ જોતાં આ ત્રીજે વિકલ્પ પણ ઉપશરી જાયછે. હું ચાચો વિકલ્પ જોઈએ:—

(૬) આપણી અનુભિલાસિક માનિનતા દેખવાની; અને શ્રી ઉપદેશમાળામાં સૂચયેલ જે દણાંતોને આપણે શ્રી વીર પદી થયા હોવાનું માનીએ રૂપ વિકલ્પ.

ધીએતે શ્રી વીરના સમય પહેલાં બન્યા હોવા જોઈએ.

આ વિકલ્પ તો કેવળ ભયંકર; જરૂરૂપથી ઉચ્છેદનાર. આ તે વિકલ્પ કે કુવિકલાસિક અમારે આ કુવિકલ્પ નથી જોઈતો; અમે અમારા અસમંજસ ભાવની અનુભિલાસિક માનિનતા દેખવીએ, પણ જે વાતો શ્રી વીર પદી બનેલી હોવાનું શ્રીમદ્ હરિશાસ્ત્રસૂરી, શ્રીમદ્ હેમચંદ્રગ્રામાર્ય, શ્રી હુલદ્રાણા સ્વામી, શ્રી મેદ્રતુગા-

ચાર્ય આહિ અમાણિક મુર્દ્દો અને શ્રી આવશ્યકવૃત્તિ, શ્રી કલપસૂત્ર, શ્રી પરિશાષપર્વ, શ્રી વિશેષાવશ્યક આહિ સત્થાંસો અમને કહે છે, તે વાતો શ્રી વીરના વખત પૂર્વે થયેલી હોવાડ્ર્ય વિકલ્પને તો અમે દૂરથીજ નમરકાર કરી વિદ્ય કરીએ છીએ.

લારે આ બધી ચર્ચાનો ઇલિતાર્થ શું ? ઇલિતાર્થ એ કે ખીલે વિકલ્પ સ્વી-
કારયોઃ અર્થાતું એ ધર્મદાસણ માનવા, એક શ્રી વીરમલુના હસ્ત-
ચર્ચાંતું પરિણામ શું ? દીક્ષિત શિષ્ય શ્રી ધર્મદાસણ; કારણું એવી ડોષ વધ્યિત્ર્ય
ધર્મદાસણ હોવાને લઈને ગીકાકારે લખ્યું હોલું જેધાએ; અને
બીજા શ્રીવીરાત્ર છ્રું-સાતમા સૈકામાં શ્રી ઉપહેશમાલાના રચનારા ધર્મદાસણ;
કારણું એથી ઔતિહાસિક ભાગત સલ્ય હરશે.

શ્રી ઉપહેશમાળાના કર્તા ધર્મદાસણને આપણે શ્રી વીરના હસ્તદીક્ષિત
શિષ્ય ગણ્યું તો ઔતિહાસિક વિરોધ શું આવે છે એ આપણે શ્રી ઉપહેશમાળા-
માંના વિલાગથી નેગતે તપાસીએ, આથી તેમજ શ્રી વીરલગ્વાન્તના સમયમાં અને
લારપછી થયેલાં પાત્રોમાં જેના વિષે શ્રી ઉપહેશમાળામાં ઔતિહાસિક સૂચવન
Historical allusions કરવામાં આવ્યાં છે, તેની નેંધ સાલવારીની રીતે Chro-
nologically) લઈએ તો શ્રી ધર્મદાસણ (પ્રસ્તુત અથવા કર્તાં) ના સમયને
નિર્ણય થવામાં કેટલીક સરળતા થશે.

(૧) પ્રથમ શ્રી વીરના સમયમાં અનેવી વાતો કેનું સૂચવન પ્રસ્તુત અથવા
ઉપહેશમાળાંતર્ગત શ્રી થયેલું હોય, તેમાંની કેટલીએક લઈએ:—
વીરના વખતની વાતો.

ગાથા ૧૩—મી—ચાંદનભાલાનું દ્વારાંત; પૂજ્યપાણું તે શાનું ? હેઠાધ્યાસને લઈ
દેહનું કે આત્માના જાનાદિ શુષ્ણુનું ? એ ઉપર ચાંદનભાલાની
અનુપ્રેક્ષા સંખ્યા.

,, ૨૦—,,—પ્રસભચાંદ્ર રાજર્ષિનું; ધર્મસાધન તે લોકસંસાચે લોક-
રંજનાર્થી છે કે આત્મસાક્ષીએ આત્મહેતુએ છે એ ઉપર.

,, ૩૧—,,—ઉદાયિરાજનું; ભારેકમીને ઉપહેશ ન પરિષુદ્ધે, એ ઉપર ઉ-
દાયી રાજના ધાતક વિનયરતનનું.

,, ૩૩—,,—‘યા સા સા સા’ નું; જે તે તે તે, જે આ લયે જી છે તે
પૂર્વે બહેન હતી એવું સંસારવૈચિન્ય પ્રકટ હેખાડવાડ્ર્યે
શ્રી વીરમલુનો બોધ.

૭૦૩. ૩૪-મી—મૃગવતીનું; વિનય અને આત્મનિંહાપર.

૩૫-,, —જાણુસ્વામી અને અલખ સ્વામીનું; હળુકમી અને સરળ લુચ
આન્યના લાગથી પોતે ગોધ ગામે; જેમ શ્રી જાણુના લાગથી
પ્રશાસ્ત ગોધ ગામ્યા.

૩૬-,, —શાલિબદ્રનું; તપ ઉપર.

૩૭-,, —મેતાર્ય મુનિનું ક્ષમા ઉપર.

૩૮-,, —કૈશી ગણુધર અને પ્રદેશી રાજનું; સહૃદાનું એ હુણના નાતા
અને સુખના હાતા છે એમ અતાવવા.

૩૯-,, —કામદેવ આપકનું; નરતી નિશ્ચાયતા પર.

૪૦-,, —ગોદાવલકનું; ઉત્સ્વરભાઈ, શુદ્ધદ્રાઘી આહિ સાધુનાં લોચકધાદિ
સંયમક્ષેત્ર વૃથા છે.

૪૧-,, —પ્રદેશી રાજા અને સૂર્યિકાંતાનું; સ્વીના રનેહનો શો વિશ્વાસ?

૪૨-,, —શેખિંડ-કાણિકનું; પુરસ્નેહનો શો વિશ્વાસ?

૪૩-,, —જાણુ પ્રલુનું; સુવિહિત પુર્ણો રૂપ-ધન-યૈવને યુક્ત કન્યા-
થોને પણ છાંડી સંસાર લાગે એ ઉપર.

૪૪-,, —મેધકુમારનું; રાજકુલ છોડી સુનિ થયેલા મેધકુમાર નેવા પ-
ણ અન્ય સામાન્ય સાધુથોનો સંબંધ સહે છે, એ ઇપે મુનિ-
ધર્મનું મહાત્મ્ય અતાવવા.

૪૫-,, —નૃલકિ વિદ્યાધરનું; સંયગુદ્ધિ લુચ પણ જે ખાહુ વિષયાસ-
કા હોય તો સંસારસંકટ પામે એ ઉપર.

૪૬-,, —શેખિંડનું; તપ સંયમના મહાત્મ્ય ઉપર; પશ્ચાતાપ થોડાં કર્મ
ગાળે, પણ વિશેષ નિકાચિત ગાળવાં તપ-સંયમ જોઈએ.

૪૭-,, —નાંદિયેણનું; નિકાચિત ઉટય જણવાનું છે. નિલ દશને ઉપરેથી
શકવા થોય ઉપરેશાલનિયવાળા નાંદિયેણ પોતે ખુઝી ન શક્યા!

૪૮-,, —શેખિંડ અને ચાંદળનું; વિનયવિદ્યાની સિદ્ધિ છે એ ઉપર.

૪૯-,, —મેતાર્ય મુનિનું વાતિમદ આહિ મહ વર્જવા ઉપર.

૫૦-,, —દૂર્દરંકદેવનું; અસારમાં જાતાનતના ગુણ્યવાન-પાપી લુચો
હોય છે: ડેટલાંક કરે તો સારુ એવા, ડેટલાંક લુચે તો સારુ
એવા, ડેટલાંક મરે તો એ ડીક અને લુચે તો એ ડીક એવા,

ગુરુ ઐતિહાસિક પ્રચ.

૨

અને કેટલાક ન મરે, ન જવે તો હીક એવા-યા બદ્દ
પાતાવાં ઉપર.

જાથા ૪૪૫-મી—કાલકસૌકર્ણિકસુત સુલભતું; પરને પીડા ન ઉપનાવવા કુશળ
ધો પણ છોડ્યો.

„ ૪૫૦-,, —કાર્તિક શેઠનું; જિનેશ્વરના ઉપહેશને અનુસરવાનું અપૂર્વ ક્રી

„ ૪૫૮-,, —જમાલિનું; આલુવિકા હેતુએ વેશ રાખવો નહિ, તેમ
નિન્દિવ થતું નહિ એ ઉપર.

ઇલાહિ વાતો શ્રી ઉપહેશમાળામાં છે, અને તે શ્રી વીરના વખતમાં અથ
ખાર પછી તરતમાં બનેલી હોવાની ગવાહી આપણુંને શાસ્ત્રો આપે છે. આથી ર
અથના કર્તા શ્રી ધર્મદાસજી શ્રી વીર પછી થયા હતા, એમ માં
ખરો ધૃતિદાસ ક્યારે વાને આપણે પ્રેરાઈએ એ સ્વાલ્લાવિક છે. કેમકે પ્રાય: આ એ
યોળ શકાય? ઐતિહાસિક સત્ય છે, કે ધૃતિદાસ, જનવાત્તો, કહેવત, દૃઢાંત
વગેરેને રૂઢ થતાં પચાસ વરસ લાગે છે. એક નામચીન પાશ્ચાલ વિક્રાન્ત* કહે છે કે:
“ The world is fifty years behind ” અર્થાત્ હુનિઆ પોતાના સમયાં
પચાસ વરસ પાછળ છે, એટલે પોતાના સમયમાં શું બને છે, શું બન્યું એની ર
ખર હુનિઆને રો બનાવ પછી પચાસ વરસે પઢે છે. પણ શ્રી ધર્મદાસજીએ વાર
મર્યાદ યોગભળવાળા પુરુષને પોતાના વારામાં થેચેલી વાતો જાણું બહાર ન હોય:

સ્વીકારી લઈ તેઓને શ્રી વીર પ્રભુના વારામાં થઈ ગચેલા માની:
વીરત ખીન-નીજા તોપણ ચાલી શકે એમ નથી; કેમકે હવે આપણે વીરાત હોયસો
સેકાનું સૂચવન.

ખસો વરસે બનેલી બાણતોનું શ્રી ઉપહેશમાળાનું સૂચવન તપાસીરે

(૨) શ્રી સ્થૂલિભદ્રજી શ્રી વીર પછી ૨૧૫ વરસે સ્વર્ગે ગયા. શ્રી વીર પણ
૧૧૬ વરસે એચો જન્મયા; ૩૦ વરસ ગૃહુસ્થી રહ્યા; અને દસ વરસ લ્યાગી રહ્ય
જેમાં ૨૪ વરસ સામાન્ય સાધુ તરિકે અને ૪૫ વરસ શુગવર તરિકે રહ્યા. ર
શ્રી સ્થૂલિભદ્રજી વગેરેનાં સૂચવન નીચે સુઝળ છે:-

“ તે ઘના તે સાહુ,

તેસિં નમો જે અકર્જ પરિવિરયા ।

શીરા વયમસિહારં,

ચરંતિ જહુ યુલિજદ્દમુર્ણી ॥ ૫૫ ॥

તે ધીર પુરુષો ધન્ય છે, તે ધીર પુરુષો સાધુ છે, તે ધીર પુરુષોને નમસ્ક

* Edmund Burke

४६

कैल धर्म प्रकाश.

मात्रा, के केंद्रों। श्री स्थूलिलद्र मुनिनी पेठे अकार्य (आचरण) नी चर्वथा विरति
हुए रहस्याधारा जेवुं (आडानी धार जेवुं आउइ) व्रत आचरे छे।

“ जो कुण्ड अप्पमाणं ,
“ गुरुवयणं न ब्रह्मै उवएसं ।

“ सो पञ्चा तह सोअइ ,
“ उवकोसवरे जह तवसी” ॥ ६१॥

जे शुद्धनां वयनमें अभाष्य करतो नथी, तेने उपदेश परिणुभतो नथी; अने
पछी तेने शोष्य करवो पहे छे. केनी पेठे ? तो के उभे शुद्धये वार्या छतां (सिंह-
शुद्धवासी) लप्तवी सुनि (कोशानी पहेन) उपकोशाने तां जई रहा, अने
पछी पञ्चासाप पाभ्या, वणी।

“ जइ छुकर छुकर कारजत्ति,
“ जणिउ जहटिउ साहृ ।
“ तो कीस अजसंनूअ-
“ विजयसिसेहि न वि खमियं ” ॥ ६६ ॥

श्री आर्यसंभूतिविजये श्री स्थूलिलद्रना संबंधमां “ तु दुक्कर
हुएरनो करनारो ” एवुं यथास्थित उहुं छतां तेना शिष्यो ते उभे
सांग्यी शक्या ?

जा नाहुं गाथामांथी पदभीमां श्री स्थूलिलद्र चंसार त्याग करी शुद्ध आज्ञा-
ये पोतानी पूर्वपरिचित वेश्या कोशाने त्यां चातुर्भीस रह्यानो
गाथामानो स्थूलिलद्र अने धावनतयो यतित थवाना धधा योग छतां आडानी धार
जा धतिदाच्।

उपर रहेवा योग्य व्रत पापयानो ईसाचि छे. दृढ़ भीमां चातुर्भी-
यना अते शुद्ध यासे आवतां शुद्धये “ अहो ! हुएर हुएरनो करनारो ” उभे श्री
स्थूलिलद्रने संगोष्ठीने कहानो, अने सिंहशुद्धवासी, सर्पभिलवासी, कूपकाष-
वासी यजु चापुओने “ हुएरना करनारा ” उभे संगोष्ठ्यानो ईसारो छे. श्री स्थू-
लिलद्र उपान-पानादि विषयसामयीशुक्त वासमां रहा छतां अने हुएर हुएर-
नो। करनारो याने अमे सिंहशुद्ध, सर्पणीद अने हुवाना लारवटिया जेवी भय-
उर नव्यावेच्ये चातुर्भीस रहा छतां शुद्ध अमने मात्र हुएरना करनारा कहे छे, अे
शुद्धनो स्थूलिलद्र प्रति पक्ष्यापात छे; अथवा स्थूलिलद्र राज्यव्याधिकारीवर्गमाना
(प्रधानमुख) छावाथी अनी शेहु-दपूहामां शुद्ध ऐच्याय छे, अवा प्रकारे शुद्ध-
यन हुएर अद्यदा आव्यानो ईसाचि छे; अने दृढ़ भी गाथामां शुद्धनां वयन उपर
अमर्य चापु स्थूलिलद्र कहुं एवुं तो हुंगे करी यतावुं ऐवा अहुंकरमां शुद्धये
पायी छां चिंहशुद्ध वासी सुनि थीके योभासे उपकोशाना आवासे रही असि-
यासमन्तयी पतित शर्द उपहुस-पञ्चासापना लाजन यथानी वाततो ईसारो छे।

એક એતિહાસિક પ્રગતિ

૨૫૭

આ અધિકાર એતિહાસિક છે, અને એ શ્રી વીરાતું હીન વીજા સૈકામાં ધ-

નેલા છે. એ વગેરે માટે શ્રી પરિસ્થિતિ પર્વ, સ્થબીરાવલિ આ-

સ્થલિલદ વીરાતું હિનાં પ્રમાણું છે. ઉપલી નણે ગાયાનો પ્રસંગ શ્રી સ્થલિલદના

ધારાના આધાર. ૩૧-૩૨-મા વરસમાં બન્યો હોવો જોઈએ, કેમકે તેઓ ૩૦ વરસ

ધરમાં વસ્યાઃ અને ત્યાગી થયા પછી પહેલું જ ચોમાસું ડેશાને

બેર રહ્યા છે; એટલે એ ૩૧ સું વરસ; અને એને વરસે જિંહગુદ્ધાવાચી સાધુએ વે-

શ્યામાંહિરે ચોમાસું કર્યું! એટલે એ શ્રી સ્થલિલદલલું ૩૨ સું વરસ. શ્રી સ્થલિલદલ

પ્રદૂષાવલિ અનુસાર શ્રી વીરાતું ૧૧૬માં જન્મેલ; એટલે આ પ્રસંગ શ્રી

વીરશ્રી ૧૪૮ વરસે (હોઠ સૈકા પછી) જનેલ.

પ્રશ્ન થાયછે કે શ્રી ધર્મદાસલું જે વીરના વળતમાં હેયાત હોય અને એ-

મના હુસ્તદીકિશિત શિષ્ય હોય, તો તેએં શ્રી વીર પછી હોઠ સૈકા પછી જનેવી વા-

તનું સૂચ્યવન પોતાના અંથમાં કેવી રીતે આણ્ણી શકે? શ્રી ધર્મદાસલુંનું આયુષ્ય

ખાડુ લાંઘ્યું હોય તો આ વાત સ્વોપ્ન અંથમાં આવી શકે; પણ તેથું લાંઘ્યું આયુષ્ય

આ કણે આ ક્ષેત્રે કોઈ આચાર્યનું આપણે સાંભળ્યું નથી. શ્રી

ધર્મદાસલુંનું આ-
યુષ્ય ખાડુ લાંઘ્યું હતું. સ્થલિલદલના પ્રસ્તુત પ્રસંગની વાત પોતાના અંથમાં આણ્ણવા

આ કણનો આણ્ણું માટે શ્રી ધર્મદાસલુંનું આયુષ્ય એાણ્ણમાં એાણ્ણું ૧૨૦ વરસનું

૪૪ વિચાર.

હોલું જોઈએ, પણ તેવી વાત તો આપણે વાંચી-સાંભળી નથી. તે-

મ કદાચ ધારેઠે ૧૬૦ કે ૩૫૭ ૨૦૦ વરસનું શ્રીમાનું ધર્મદાસલુંનું આયુષ્ય

હોય, તો પછી વીર પછી ખાંચસો વરસે થયેલા શ્રી વજા સ્વામીના પ્રસંગની

વાત તો જે શ્રી ધર્મદાસલુંનું આયુષ્ય ખાંચસો વરસ કે તેથી વધારેનું

હોય તોજ પોતાના અંથમાં લાવી શકે; પણ એ કણે એવાં હીધોયું

મનુષ્ય નથી એની શાખ, ઈતિહાસ, અનુભવ (સૂત, નિર્યક્તિ, ભાષ્ય, ચુણ્ણુ,

વૃત્તિ અને પરંપર અનુભવ) શાખ પુરે છે. શ્રી ૪૪શુક્રીપ્રજ્ઞપિત અનુસાર

આ કણે આ ક્ષેત્રે મુખ્યવૃત્તિએ ઉત્કૃષ્ટ આયુ ૧૨૦ વરસનું હોય, એમ

શ્રીયુત અનુષ્યાંહ મહુક્યાંહ કહે છે. વળી એઓજ શ્રી ઉરિલદલસુરિકૃત

આવશ્યકીયા (૨૨૦૦૦) ની શાખ આપી શ્રી *આર્થરક્ષિતસુરિ

પાસે ઈંગ્રેઝ વિપવેણે આવી હુસ્તરેખા હેખાયાનો અધિકાર આપે છે. (પ.

ર. ચિ. ગન્ધ ૧૨૧)....તેમાં બસો-ત્રણુસો વરસ જ્યાં પછી શ્રી આર્થરક્ષિત સુરિ

કહે છે કે આ તો ઈંગ્રેઝ, હેવ વિના આટાં આયુષ્ય ન હોય, ઈલ્યાડિ. વળી ભરહુમ

જ શ્રી સરયકલ સસ્તિની દીકામાં કાલિકાયાં કબા છે, પરંતુ એ બાને નામ એ-

કા પુરીનાં છે, એમ શ્રી ધર્મરલ પ્રકશયાદી સિદ્ધ થાય છે.

श्रीमहे राज्यकुडे श्री सदभाष्टुसंहितानी शाण आधानो अधिकार पण्डि तेज प्र-
वासी वर्तमानं श्रीभुत शेष आपै हे, तेमां ज्ञानवेळे के “धन लभमानं जन्महेय, ते कुऽलिमां
कुरु गीतनो शुद्ध छेय, अने अग्यारमे तुलानो शनि तथा शुक्र छेय एवी रीतना
नह छेय, ते अशो इर्ने अग्वान्त छेय; वणी आठमे कोई थुक आवे नहीं, अने
जनिनी के शुक्रनी दृश्यामानं जन्म याय एवी रीतनो योग आवे तो २१० (असोहश)।
जन्मतुं तेतुं आयुष्य याय, ४० ”

आम जेतां श्री धर्मदात्य गणितुं आयुष्य उत्कृष्ट १२० वरसानुं मानी शकाय,
२००-५०० नु मानी न शकाय; अनेके श्रीम छेय तो श्री आर्यरक्षितसूरि (कु-
लिकार्य) ने, उपर ज्ञानव्युं छे तेम, २००-३०० वरस जेया पछी आ तो ईदि
नेव छे, अग्र ऐकहरु क्षेत्रवानी जडूर न पडत; अने श्री ज्ञानुदीप ग्रन्ति तथा
वावश्यकनी टीकामां श्री दुरितिदत्तसूरि एनी नांग न लेत.

कोई प्रश्न करे के श्रीमान् अवधिजानी हुता, तेथी एओश्री स्थूलिभद्र आदि
ज्ञानितातीसुनावे— अंगे सूचवन उरी शकाय, आ दृवीद सामे पण्डि वांधा आवे छे:-
जेवे! (अ) अवधिजान क्षेत्राश्री छे, अने उत्कृष्ट ते बोकावधि छे.
जेमां द्रव्य मात्र शबाहु जाय छे; ए लेकमां पण्डि अवधिजानीने दृपी पदार्थी प्रत्यक्ष
जाय छे, अदृपी नहिं; अने तो काणनो प्रश्न छे; अने काण तो अदृपी औपचारिक
जाय छे, एवेदे अवधिजानी वर्तमानउपी पदार्थनेज नेह-नाणी शडे छे. आम
जेतां श्रीमान् अवधिजानी होवा छतां जे तेजेश श्री लीरमुखा वरामानं विधमान
देय तो आरपटी १५० वरसे घनेला प्रसंगने पोताना वांधमां सूचनउपे टांडी
जाए ए वात बांधगेसती नथी.

(आ) क्षाच येताना श्रुतसानना अणे एओश्री लावी लाल्यु छेय, अथवा सर्वज्ञ
सर्वदर्शी श्री महावीर देवना श्री मुणेश्वी एओश्री लाविलावतुं श्रवणु
कुरु छेय, अथवा कोई अन्य उवलीदारा एओने लाविणे थनारा श्री
स्थूलिभद्र आदिनो प्रसंग जाणुवामां आव्याह छेय, अने तेथी तेजेश
ए ए प्रसंगेनुं दृष्टपण्डि कुरु छेय, तोपण्डि विशेष आवे छे.

दृष्टां हमेशां भूतकालतुं छेय छे; ए (दृष्टां) शाष्ट्रज “पूर्वे”
ज्ञानितानो दृष्टां “भूतकाले” एवुं शूचवे छे. उपदेशमाणामां वे प्रसंगने लई आ-
वायी शकाय आवो! र्यसं भूतिक्लय, स्थूलिभद्र आदिनां सूचवन आयां छे, ते वांध दृष्टां
दृपी छे, अतु नहुने अनित धारे के भूतकालामां व्याहोवा नुं संहेजलभुई आवेषे.
वणीआयाहनीमां “खक्षित” (क्रमित) यष्टपटज (अम्यासांण्या) भूतकृहं तनुं दृपछे.
आयी एम सूचित याय छे के प्रश्नुत अथ श्री स्थूलिभद्रना वर्खत पछी

એક અત્િખાસિક પ્રમા.

૨૪૯

લખાયો છે, નહિ તો લખવાની શૈલિ એવી થાત કે :—“ જેમ ભાવિકાળે શ્રી સ્થૂલિલદ્રને સંભૂતિવિનય હુદ્ધર હુદ્ધર કરનાર એમ કહેશે. ધિલાદિ.” જાનીએચે ભાવિકાળની વાતો વર્ણવી છે. શાસ્ત્રોમાં એવા ધખુા પ્રસાગ છે. પાંચમા-છ્ટા આરાના સાથ, કલિ મહાત્મ્ય, ભાવિ ચ્ચાવિશી, ધિલાદિ અંગે જાનીએ. પોતાના જ્ઞાનથણે પ્રવચન ભાવી ગયા છે, અને એ સત્ય નિવજ્ઞાં છે. શ્રી સિદ્ધસેનહિવાકરે ભાલવપતિ વિકુમને કહેલ કે :—

“ પુણે વાસ સહસ્રે,

“ સયંમિ વરિસાયા નવનવઃ કલિએ ।

“ હોદ્ધ કુમર નરીદો,

“ તુહ વિકમરાયસારિચ્છો ” ॥

“હે ! વિકુમનાય ! પવિત્ર ૧૧૬૮ની સાલમાં તારા જેવો કુમારપાળ રાજ થશે.”

તેમજ શ્રી ધનેશ્વરસૂરીએ શાનુંજ્ય મહાત્મ્ય થાથ વિ. સં. ૪૭૭ માં લખ્યો છે, તેમાં શ્રી શાનુંજ્યના ઉદ્ઘારના ભાવિ વૃત્તાંતોના લેખ છે, તેમાં શ્રી વસ્તુપાળ, કુમારપાળ, વાણિસાટ, સમરાશા આદિ પ્રભાવક પુરુષોનાં ભવિષ્ય કથન છે, જે અધ્યાં સાચાં નિવજ્ઞાં છે. વળી હુમણુના કાળમાં મારા દાદા *ચતુર્ભુજભાઈને વિ. સં. ૧૮૬૮માં ડોઈ સંવિચ્છન સાધુએ બહાર ગામ જતાં વાડમાં ભાવિ કથન કહી એધ પમાદ્યા હતા. (મારા દાદા એક ભદ્રિક પરિણુભી ધર્માત્મા હતા. સાધુના ભાવિ કથન ખરાં પર્યાં હતા.) મને પોતાને પણ સત્પુરુષનાં ભવિષ્ય કથન ઉપર શ્રદ્ધા ચાંટી છે.

આવા પ્રકારે ધર્મદાસળ કહી શકત, પણ તેઓએ તો ને વાતો કહી છે, તે ભૂતકાળનાં દૃષ્ટાંતરૂપે કહી છે; એટદે એઓએ શ્રી એ દૃષ્ટાંતળની પાત્રોની પછી થયા હતા એમ માન્યા વિના ચાલે એમ નથી.

•ધારો કે ભાવિ પ્રસાગરૂપે શ્રી સ્થૂલિલદ્ર આદિનાં વૃત્તાંતો ઉપદેશમાળામાં આપ્યાં છે, તો કુરી પ્રશ્ન ઉઠે છે કે છેવટમાં છેવટ વજાદ્વામી સુધીની એટલે કે વીરાત ૬૦૦ છસો વરસ સુધીની વાતોનુંજ કેમ સૂચવન હશે ? એથી પણ આગળના આગામિ કાળનું કથન કહી શકત.

અપૂર્વો.

૩૫ મનસુખ કિરતચંદ, કિરતચંદ ચતુર્ભુજ.

उज्जित कुमार.

मनोवाकाययोगानां, चापद्वयं दुर्भवदं मतम् ।

तच्यागान्मोक्षयोगानां, प्रसिः स्याकुञ्जितादिवत् ॥१॥

लालार्थ—“ मन, वचन अने कायानी चपणता हुएःदायक कहेंही छे, तेनी चपणतानो लाग करवाथी उन्नित मुनि वर्गेनी क्लेमभोक्षयोगानी प्राप्ति थाय छे.”

नंदीपुरमां रत्नरेखर नमे राज्ञ राज्य करतो हुतो. तेने रत्नभती वि-
गेंह राणीयो हुती. तेमने भूतवत्साना दोषने लीधे क्लेट्लां आणके. थतां ते सर्व
मरी जतां हुतां. ते दोषना निवारण भाटे तेणु अनेक उपायो कुर्यां, पणु ते सर्व
निष्ठण थयो. एकदा राणीने एक पुत्रने प्रसव थयो, ते पुत्रने मरण पारेलो.
धारीने उकडामां नाणीहीयो. देववशात् ते पुत्र मरण यायो नहीं; तेथी तेने उकड-
आमांथी पाणो लई लीयो. तेनु नाम उन्नितकुमार पाडयुं. अनुकमे ते युवावस्था
यायो; परंतु द्वलावेज मनमां अत्यंत अहुकारी थयो. शरीरवडे भणु येयो
अहुकारी थयो के केंद्राने भस्तक नगावे नहीं, तेम वाणीथी पणु फुर्वचन योखनारो
थयो. आणा अगतने तुणु समान गणुतो सतो स्तंभनी क्लेम अङ्कड रहीने पोता-
ना भातापिताने पणु नमे नहीं; एकदा ते देवभाण्डामां गयो. लां लाणुवनार गु-
ड्ने उंच आसने ऐडेला जेधने तेणु इहुं “ कै ? ” अहे ! अमार अने अभावी रैय-
वना आपेका दाणुनो आनार थर्धने उच्या आसनपर बेसे छे, अने मने नीचे ऐ-
साउ छे. ” एम कहीने शुद्धने वात भांशी नीचे “ पाडी हीधो ; ते वात सांखणीने
‘ आ कुपुत्र छे ’ एम ज्वाली रान्वें तेने पोताना देशमांथी हूर कयो. ”

उन्नितकुमार ज्ञालेतो यालेतो एक तापसना आश्रममां गयो; लां पग उपर
पग चडावीने ते तापसेना चासे ऐडोः एट्ले तापसेअ तेने शिखामणु आपी के
“ हे भाष्यशाणी ! विनय राण. ” ते ज्ञालेयो के “ भस्तकपर जटानुट राणनार
अने आणे शरीर भस्त चेणिनार नम आवाञ्याने विषे विनय शो ? ” तेहुं गर्विष्ट
वचन सांखणीने तापसेअ तेने तरत त्यांथी आढी भूकयो. एट्ले ते क्लाधथी योलयो
के “ अहे ! मारा पिताहुं हुं राज्य यानीश त्यारे तमादो नियहु करीश, ” एम
कहीने बणउतो बणउतो ते आगण यावयो. मार्गभां तेने एक सिंह भजयो, तेने
जेधने द्वायमां तीक्ष्ण अङ्ग लई अहुकारथी तेनी सन्मुणज यावयो. सिंहनी साधे
कुद्ध थतां सिंह तेने खार्ह गयो. ते भरीने गर्वल थयो. लांथी भरीने डाट थयो,
लांथी भरीने श्रीथी नंदीपुरमांज पुरोहितनो पुत्र थयो. याव्यावस्थामांज तेच्याह

१. भरेवां आणक आनन्द तेनो दास.

उलिङ्गत कुभार.

२१

विद्यानो पारगाभी थयो. त्यां पणु अहुकारथीज मत्यु पामीने तेज नंदीपुरम् ग्रायन करनारी ३ दुंध थयो. तेने लघुने पुरोहितने तेनापर धेणा स्नेहु थवा लाज्ये ओवामां डोई डेवणासानी ते गामे पधाधो, तेने पुरोहिते नम्रताथी पूछ्यु ५ “ पूजन्य ! आ दुंधना पर भने धेणु प्रेम थाय छे तेनु शु कारणु ? ” लारे डेवणीं तेना पूर्व लवनु सर्व वृत्तान्त उहु, ते सांखणीने ते गायकने बलिसमरणसा थयु; तेथी ते डेवणी परमात्मानां वयन सांखणवानो रसिक थयो. पछी ते गाय पितांता उद्घारने उपाय पूछ्यो. लारे श्री डेवणीचे स्यादादपक्षथी यु ओहु भन, वयन अने कायाढप वणु योगनी शुद्धिनु स्वरूप प्रकाशित उहु, तथा मे क्षना डेतुरूप पांच योगना स्वरूपनु पणु निरूपणु कर्यु. ते आ प्रभाणे—

मोक्षेण योजनायोगः, सर्वोऽप्याचार इत्यते ।

विजिष्य स्थानवर्णार्थादिंवनैकाग्रगोचरः ॥ . ? ॥

आवार्थ——“ सर्व आचार भोक्षनी साथे योग करनार होवाथी योगरूप कर्तु छे. तेमां पणु स्थान, वर्ण, अर्थ, आलंभन अने ओकाशता ए खांचने विशे करीने योगरूप भानेवा छे. ”

गाही मिथ्यात्वादिकना कारण्यभूत ओवा भन, वयन, कायाना योग कर्मवृ करवाना डेतुलूत होवाथी थहुणु करवा. नहीं पणु भोक्षसाधनना डेतुलूत योग ज अहुणु करवु. समझ कर्मनो जे क्षय ते भोक्ष छे. भोक्षनी साथे नेडनार होवा ते योग उडेवाय छे. जिनशासनमां उडेवा चरण सतति, करण समतिरूप र आचार भोक्षना उपायलूत होवाथी योग छे. तेमां पणु स्थान, वर्ण, अ आलंभन अने ओकाशता ए पांच प्रकारना योगने विशेषे करीने भोक्षसाधन उपायमां डेतु भानेवा छे. अनाहि कायाथी परलावमां आसक्त भावी भवत्रभव्य करनारा होवाथी पुढगणना लोगविलासमां भन थयेवा होय छे, ते आ योग प्राप्त थतो नन्थी. परंतु अभारे तो एक भोक्षज साध्य छे; एम धान जे ग्राही शुद्धसमरणु तथा तरवजिज्ञासा विग्रे योगवडे निर्भण, निःसंग अने पर नंदमय आत्मस्वरूपने संलारीने तेनीज कथा सांखणवामां प्रीति रागे छे, ते छीने परंपराए आ योग सिद्ध थाय छे; पणु मङ्गेवा मातानी जेम सर्व आ ओने अल्प प्रयासे सिद्ध थती नन्थी. केमके मङ्गेवा माताने तो आशातनां होय अल्पांत अल्प हता, तेथी तेने प्रयास विनाज सिद्धि प्राप्त थध हुती; अने ध ल्लयेने तो आशातनाहि होय अत्यांत होय छे, तेथी गाठ कर्मना धांधनवाणा वाने लीषे तेमने तो स्थानाहि कमे करीनेज सिद्धि भास थाय छे.

१ दुंध डेल्ना लाति छे.

તેમાં દ્વયાન એટલે ડરવી, અંધોત્સર્જિ ઉલા રહેલું, વીરાદિક આસન કરતું તરફ મુદ્રાચેણે વગેરે; વાર્ષ એટલે અદ્ધરોને શુદ્ધ હિન્દ્યાર કરવો, એટલે વાર્ષ વિસ્તવ્યો, આલંબન એટલે અર્ડતસ્વરૂપ વાચ્ય પણ હોય છે રાખ્યો, અને એકાથતા એટલે શુદ્ધ સ્વરૂપમાં નિક્ષેત્રતા શરીર કર્યાં હોયની એકત્રાન થાય, ત્યાં સુધી અંગન્યાસ (આસન), મુદ્રા હોય રહ્યું શુદ્ધ હોઈ ચાચશ્યક, ચૈલ્યાંહન, પડીલેદુણ વિગેરે ક્રિયાચ્ચો ઉપયોગની વાપણતાના રણુ માટે અવશ્ય કરવી. કેમકે તે સર્વ લુયેને અતિશય હિતાની અને, વાર્ષના ફરમથીજ તત્ત્વની પ્રાપ્તિ થાય છે.

હેવે તે યોગમાં આદ્ય અને અભ્યર્તર સાધકપણું બતાવે છે. યોગપંચક-માં સ્થાન રહ્યું એ એ કર્મયોગ આદ્ય છે, અને બાકીના ત્રણ જ્ઞાનયોગ તે અભ્યર્તર છે. યોગ પ્રકારના યોગ દેશવિરતિ અને સર્વવિરતિને વિષે અવશ્ય હોય છે, આ રીતે યોગ વાપણતાની નિવૃત્તિમાં કારણરૂપ છે. માર્ગાનુસારી વિગેરેમાં આયોગ થી રહ્યું હોય છે.”

પ્રમાણે કેવળીના મુખ્યથી ધર્મોપદેશ સાંભળીને સાંસારની અનિત્યતા હુંઠ અને હુંણ બન્ને શુદ્ધ ધર્મને, અંગીકાર કરી પાળીને સ્વર્ગ ગયાં. તેને અનુક્રમે સુદ્ધિને પામશે.

ધર્તિ ઉજિઝત કુમાર કથા.

નાની સરણી કથા ઉપરથી સાર ઘરોં શ્રહણ કરવાનો છે. પ્રથમ તો જે અભિમાનથ્રસ્ત થાય છે તે ઉજિઝતકુમારની કેમ દુઃખી થાય છે, અને શ્રદ્ધા કરે છે. ભવતિમણુમાં પણ જે સદ્ગુરુની જ્ઞાગવાઈ પ્રાપ્ત થાય છે, તો તેની ધર્મની પ્રાપ્તિ થઈ શકે છે, અને ભવતિમણુટણી જાય છે. યુદ્ધમહારાજ પણ યોગ્યતા જેઠને તેને અનુરૂપ ઉપદેશજ આપે છે કે જેના આરાધનવડે તેની જીવનમાં સિદ્ધિ થાય છે. હુંખ થયેલા ઉજિઝતકુમારના લિવને અને પ્રધાનને લગ્બાંતે બહુ યોગ શાખાઓમાં ધર્મ સમન્વયો છે, અને યોગની વાપણતા ટા-જવા માટે સ્થાન, વાર્ષ, અર્થ, આલંબન અને એકાથતારૂપ પાંચ યોગનું હુંદું સ્વરૂપ મોશ્ખસાધનના હેતુભૂત બટાર્યું છે: તે પાંચમાં પ્રથમના એ યોગ ક્રિયારૂપ છે, એ પાંચથાં નાણું યોગ જ્ઞાનરૂપ છે. તેની અંદર કાર્યકારણુભાવ રહેલો છે. તે પાંચમાં રહેણીય છે. જેમ જેમ આગળા આગળાના યોગની પ્રાપ્તિ થાય છે, તેમ તેમ પણ જીવની ચાચશ્યકતા એવી થાય છે. પાંચ યોગના સ્વરૂપનો કેરસો વિસ્તાર કરી રહેલો થઈ શકે છે. કારણું કે તેની અંદર સર્વ પ્રકારની જ્ઞાનક્ષયાનો સમાચેશ કરવામાં આવ્યો છે. યુદ્ધમાન હલુકમી પ્રાણી યોગ શાખાઓને સાર શ્રહણ

ત્રીજી ગુજરાતી સાહિત્ય પરિષદું

૨૫૩

કરી નિકરણ શુદ્ધે તેનું આરાધન કરી આ હુખ્યથી જરેવા સંસારસમુક્રના પારને
આગી જાય છે.

ત્રીજી ગુજરાતી સાહિત્ય પરિષદું

રાજકોટ તાઠ ૨૮-૨૯-૩૦ અક્ટોબર,

આ પરિષદુનો મેળાવડો રાજકોટ સુક્રિયામે આસો શુદ્ધ ૧૫, વદ્દ ૧ ને વદ્દ ૨
એ વણું દિવસે દીવાનાં આહારું આ આલાલ સાફરલાલ દેશાઈના પ્રમુખપણું નીચે
મળ્યો હતો. તેની અંદર કેટલાક રાજવંશીઓ, દીવાને, વિદ્યાને, વ્યાપારીઓ
અને સમારીઓએ લાગ લીધો હતો. તેની અંદર સતકાર કમીટીના પ્રમુખ તરીકે
ઉંડણના રાણીસ્થાહેય શ્રી નાંદુંઘરખાની નીમનોક કેરવામાં આવી હતી.
એમણે સતકાર કમીટીના પ્રમુખ તરીકે જે લાપણ આપ્યું છે તે ખાસ વાંચવા
લાગક છે. તેની અંદર ચારે પુરુષાર્થ સંભંધી સાહિત્યને લાપાદેવીના પૃથ્વે પૃથ્વે
અંગના આભૂષણ તરીકે કંદ્પવામાં આવેલ છે, તેમાં ચોથા પુરુષાર્થ સંભંધી તેઓ
લગે છે—

“ લાપાના નાકતું આભૂષણ સુક્રિયા છે. સુક્રિયા એટલે સંસારણાંધનથી છૂટી
અશોષ હુખ્યાની નિવૃત્તિ ને પરમ સુખની પ્રાપ્તિદ્યા એક દશા છે. એ સ્થિતિને અનુ-
ભવ એજ મનુષ્યમાત્રનો પરમ પુરુષાર્થ છે. સધળા પુરુષાર્થનું એ નાક છે. માણુસ
આકાશ પાતાળના લેટોની માહિતગારી મેળવે, મહાસાગરની ડંડાઈ માપે, તરૈહ
તરૈહની શોધપોળ કરે, પુસ્તકશાળાના અનેક અંશેના અભિપ્રાયથી મગજને ડ્રોડસ
ભરે, પરંતુ જ્યાં સુધી પોતે કોણું છે તે જાણુતો નથી તો તેણે શું જણાયું? તમામ
ડ્રોપની થતો વસ્તુ અસ્થિર છે, કાગાધીન છે, તો સ્થિર ને કાળાતીત વસ્તુ કદ્ય છે
તેની શોધ કરવી ઘણું જરૂરની છે. પ્રાણી માત્ર સુખની ધંઢા રાખે છે. વિષયના
લોગથી સુખ મળતું લાગે છે, પણ પરિણામે તે હુખ્યાને હેતુ જ સમજ્યામાં આવે
છે. જેના ચોગથી સુખ તેના વિચોગથી હુખ્યા, એ વાત કેને અજાણું છે? તો એવાં
મિશ્રિત સુખને ડેકાણું કેવળ શુદ્ધ સુખના પ્રાપ્તિની અભિવાસ સહુને હોવી જોઈએ.
એ સુખશાંતિ લારેજ મળે-લારેજ સુખદ્યા થનાય-કે જ્યારે આ જગતનું યથાર્થ
સ્વરૂપ સમજ્યામાં આવે, જીવ ચેતનનો ને ઈશ્વર ચેતનનો શો સંભંધ છે, માણુસનું
શરીર પરિયા પછી તેના જીવ ચેતનની શી દશા થાય છે, પુનર્જન્મ છે કે નહિ,
અનાહિ કાળથી ચાલતા આવેલા સંસારનો અંત છે કે નહિ, છે તો શી રીતે; એવા
એવા સવાલોનું ઝુદ્ધ કખુલ કરે એવું સમાધાન જેમાં ઝીંધું હોય એવા સોકશાસ
સંભંધી સાહિત્યથી લાખ સુખ્યત્વે કરીને સુશોભિત થવી જોઈએ. આ અપૂર્વી ને
અધ્યાત્મિક વિષય ડ્રોપ પ્રાચીન અધિમુનિઓએ જોઈતું અજવાણું પાડાયું છે.

૪૫૬

નોંધ ખર્મ પ્રકાર.

ભરતભર્તની આ ભારતી વિકા આપણુને ખાસ વારસામાં મળેલી કિંમતી પુંલ છે.
‘ગાંધી ભાવાંતર હૃપે તથા સ્વતંત્ર લેખ દ્વારા તેની અસિદ્ધ ભાષાસાહિત્યની ચઠતી ઉત્તારી છે, એમ હું માતું છું.’”

એક રજ્જુદ્દારી સ્વીકારિના મુખમાંથી આવા શાખાનીકોને તે ખર્મેખરા પ્રશાસનીય છે. અન્ય સીર્જે તેનું અનુક્રમણ કરવા યોગ્ય છે.

પરિષદ્દના પ્રમુખ હીં બાં અંધાલાલસાહિત્યનું ભાષણું પણ વાંચવા લાયક છે, તેની અંદર બહુ વ્યવહાર સુધ્દાઓ સમાવેલા છે.

આ પરિષદ્દની અંદર વણું હિસમાં કુલ ૪૪ લેખો વાંચવામાં આવ્યાછે, તેની અંદર વણું લેખો કૈન લેખકોના વાંચાયા છે—

૧. રા. રા. પોપટલાલ ડેવણચંહ શાહ.

કૈન ગુજરાતી સાહિત્ય

૨. રા. રા. મનસુખલાલ કિરતચંહ મહેતા.

કૈન સાહિત્ય

૩. રા. રા. મનસુખલાલ રવળુલાઈ મહેતા.

ગુજરાતી ભાષાનો જન્મ જૈનીઓથી હોવા સંભવ છે?

આ વણું લેખકે પૈકી પ્રથમના લેખકે પોતાનો લેખ મોટે ભાગે જતેજ વાંચ્યો હતો, પરંતુ તે છાવેલ ન હોવાથી તે સંખ્યાંધી અન્ય કાંઈ લખી શકતા નથી, તેથી તેમણે શ્રીતાજનો ઉપર કૈન સાહિત્યના સંખ્યમાં સારી અસર કરી હતી. અન્ય લેખકે વણું પોતાનો લેખ જતે વાંચ્યો હતો, પરંતુ લેખ વણું મોટો અને વખત વણું હુંડો તેથી તેમાંથી બહુજ અદ્ય ભાગ વાંચી શક્યો હતો, આ લેખકે પોતાના લેખમાં કરેલો પ્રયાસ બહુ સ્તુતિપાત્ર છે, તેમનો આજો લેખ સાંઘાત વાંચી જવાની હરેક કૈન બાંધુને લલાગણું કરવામાં આવે છે.

ત્રીજા લેખના લેખક પોતે જતે હાજર થઈ શક્યા નહોતા તેથી તેમનો લેખ કેન કેન્દ્રરન્સ તરફથી આવેલ શાસ્ત્રી તુકરાને વાંચવા લીધો હતો; પરંતુ તેમનો કેંદ્ર ભરાયા ન ચાલવા વિગેરે કારણથી તે બહુ અદ્યપજ વાંચાયો તેમજ સંલાયો હતો, અન્ય લેખ આજો વાંચાવાની ખાસ આવશ્યકતા હતી. કારણું એમના લેખના સાથ્યામાં જે શાખા છે તેને અંગે ગુજરાતી પત્રના ચર્ચાપત્રી વિગેરએ જે ગેર-શૈખાનુતી ઈરાદા પૂર્વક ફેલાવી દીધી છે તે થણે ભાગે હૂર થઈ જત. સફરહુ ચર્ચા-પત્રી કહેવા ભાગે છે તેમ રા. રા. મનસુખલાઈ પોતે કહેતાજ નથી કે ‘ગુજરાતી લાંબા અને અનાંબી છે; એએ પોતાના લેખનીએંદ્ર “ગુજરાતી ભાષાનો જન્મ જૈનીઓથી આપણે શુ ?” એ ભથ્થાળા નીચે રસ્ય લગે છે—

ગુજરાતી ભાષાનો જન્મ કેન્દ્રિયાથી એટલે શું ? શું ગુજરાતી ભાષા કેન્દ્રિયાથી બનાવી ? પૃથ્વીપર કેટલી ભાષાઓ વિદ્યમાનતા ધરાવે છે. કેટલી ભાષાઓ... માંથી કોઈ પણ ભાષા કોઈ ચોક્કસ વર્ગી ભાષા બનાવવાનો ઈરાદો રાખી બનાવી છે. એમ હેઠળું એ યોગ્ય નથી; અને જે યોગ્ય નથી તો ગુજરાતી ભાષાને ઈરાદાપૂર્વક કેન્દ્રિયાથી બનાવી એમ કહેવાનો હેતુજ કેમ હોય ? જેને જૈન પરિલાયામાં દ્વાય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવ કહેવામાં આવે છે તેને અનુસરી ભાષા બંધાય છે, અને તેજ નિયમાનુસાર ગુજરાતી ભાષા બંધાઈ છે. શાસ્ત્રકારો કોઈ પણ કાર્ય થવામાં એ કારણો કહે છે. ઉપાદાન અથવા મૂળ કારણ અને નિમિત અર્થાત ઉત્તર કારણ. દ્વાય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવ એ ગુજરાતી ભાષાની ઉત્પત્તિનું ઉપાદાન કારણ છે; અને દ્વાયાહી ઉપાદાન કારણમાં જેટલે અંશે કેન્દ્રિયા નિમિત થયા હોય તે તેઓનું નિનિત કારણ છે. આ નિમિત કારણની અપેક્ષાએ કેન્દ્રિયાથી ગુજરાતી ભાષાનો જન્મ કર્યા છે. ”

આમ છત્તાં કેટલાક વિદ્યાર્થીઓએ તેના અર્થ જીનો જીજુનો જીજુને જિજ્ઞાસાવમાં વૃદ્ધિ કરવામાંન્દ પોતાનું શોર્ય સમજે છે, વળી કેટલાક, સુસ કહેવાતા લાંઘાયો એ મનસુખતાલના લેખો. એક ધીનથી વિડ્ય છે, એમ ઠરાવી તેની અંદર વિશેધ ઉત્પત્ત કરવામાં પોતાની બહાદુરી સમજે છે. એમ એ અને લેખ સાધારણ વાંચી જાય છે. તેથી અમને તો એ બંને લેખકાનું સાધ્યાંહિંહ એકજ જણ્યાયું છે. આજ સુધી ગુજરાતી ભાષાના આદ્ય કવિ તરીકે ગણ્યાતા શ્રી નરસિંહ મહેતાની પૂર્વે થયેલા જૈત્યાર્થીના ગુજરાતી ભાષાના લેખોની એ બંને લેખકો નોંધ આપે છે. તેની હુંદી વિગત નીચે પ્રમાણે છે—

વિ. સં. ૧૪૦૫ માં હિન્દુમાં લખાયેલ રાજશોભરનો વસ્તુપાળારાસ તથા ભરત ધારુભર્ણીરાસ અને ક્ષેમગ્રકાર રાસ.

વિ. સં. ૧૪૧૨ માં વિજયકાદ અથવા ઉદ્યોગાંત સુનિયે લગેત ગૌતમ સ્વામીનો રાસ, હંસવચ્છરાસ, રીલરાસ.

વિ. સં. ૧૪૧૩ માં શ્રીહરસેવક નામના જૈનસુનિયે લગેત ભમાયુદ્ધરાસ.

વિ. સં. ૧૪૫૦ માં શ્રીસોમસુદરસુનિયે લગેત આરાધનારાસ.

વિ. સં. ૧૪૫૫ માં શ્રીસુનિસુદરસુનિયે લગેત શાંતરસરાસ.

આ ઉપરાંત રાઠ રાઠ મુખ જણાવે છે કે હુમણુંજ તેઓના જેવાસાં એ રાસ આવ્યા છે. બંને જૈન છે, એક વિડ્ય સંવત ૧૨૨૫ કે ૧૨૪૫નો અને બીજે વિ. સં. ૧૩૨૭નો સાતકેવી નામે છે. ભાષા અપ્રકૃત પ્રાકૃત લાગે છે.

૩૫૬

જૈન ધર્મ પ્રકાશ.

આ પ્રમાણેની નોંધ આપવા વડે અને વિક્રાનો એમ સિદ્ધ કરવા માગે છે કે “આજ સુધી શ્રી નરસિંહ મહિતાનું ગુજરાતી પદ્યસાહિત્ય સર્વથી પણેલાનું છે જોમ જણાવાથી તેને તમે આહિ કવિની પદ્યથી આપી હતી, અને તેમાં અમે કાચ પણું જાતનો વાંધા ઉડાયો નહોતો. હવે જ્યારે અમે તેના કરતાં સો અથવા તેથી વધારે વર્ષ અગાઉનું નેત્નો આચાર્યનું ‘કેલ્લું’ ગુજરાતી પદ્યસાહિત્ય ખાતીઓએ થાયે તથા તમને નરસિંહ મહેતાને આપેલું આહિ કવિનું ઉપનામ થીજાને આપવામાં શા કારણુથી શિતળતા આવે છે? હજુ અમે કણુલ કરીએ છીએ કે તમે ત્યાર અગાઉનું તમારું સાહિત્ય ખતાવશો તો અમારા આચાર્યને આપેલું ઉપનામ ખુશીથી તેમને અર્પણ કરશું.”

લાપાની હત્યનીનો દાવો તો અને વિક્રાનો પોતે કરતા નથી. પરંતુ જૈનીઓ-એ ગુજરાતી લાપાને પુષ્ટણ પોથણ આપ્યાનું, તેને વૃદ્ધ પમાયાનું અને તેની માતા તુલ્ય પ્રાકૃત લાપાને અપ્રતિમ માન આપ્યાનું તો એ અને લેખકે કહે છે, અને તે અક્ષરસઃ સત્ય છે, એમ સિદ્ધ થયેલું છે.

“પ્રાકૃત લાપાનું મહત્વ કેનોમાંજ હતું, જૈનેતર અન્ય પ્રાકૃતને હુલકી ગણી હુલકા પાત્રોને સૌંપત્તા-જેમ નૈતનોંદ્ર સિવાયના નાટકોમાં દેખાય છે તેમ.” ચાચી રા. રા. મનસુખલાલ રવજુલાઈની હ્રવીલને રા. રા. મનસુખલાલ કીરતચંદ કેટલીક દ્વારાથી બુદું રૂપ આપે છે. પરંતુ પ્રાકૃત લાપાનું મહત્વ જૈનો જૈએલું ધીમાં નહોતું એ ચોક્કસ હકીકત છે. એમકે જૈનોના મૂળ આગનો અને ધીન અનેક બંધો જેટલા પ્રમાણમાં એ લાપામાં છે તેટલા પ્રમાણમાં ધીન દેખ્ય પણ દર્શનના નથી. વળી જૈનેતર અન્ય પ્રાકૃતને હુલકી ગણુત્તા હતા એ વાત મનસુખલાલ રવજુલાઈન લખે છે એમ નથી, પણ અન્ય સાક્ષરી પણ એ વાત કણુલકરે છે. રા. રા. રમણુલાઈ. મહિપત્રતરામ નીલકંઠ જેણો પ્રસિદ્ધ સાક્ષર છે તેઓ પરિપદ્ધની અંદર આપેલા “ગુજરાતી ભાપાનો આરંભ” એ મથ્યાળાવાળા લેખમાં લખે છે—

“ધ્રાહણ્ણો તો પ્રાકૃત ભાપાને હુલકીજ. ગણુત્તા હતા, પ્રાકૃતને શિષ્ટ ભાપા તરીકે તેઓ કણુલ રાખતા નહીં + + + + ધ્રાહણ્ણોના બંધો સંસ્કૃત ભાપામાંજ દાખાયા. નાટકમાં પણ તેમણે વિધિ કર્યો હતો કે શિષ્ટ પાત્રો પાસે સંસ્કૃત ભાપા જોલાવવી.”

આ હકીકત રા. રા. મનસુખલાલ રવજુલાઈના લેખને મુશ્ટિ આપે છે. પ્રસ-ગ્રાપત ગુજરાતી પત્રમાં દોષનારુ રસિક નામના ચર્ચાપત્રીના સંણધમાં દાખવાની જરૂર પડે છે કે એઓ જૈનોતે હુલકા પાડવા મારે લખે છે કે “જૈનો લાયોલાજ નહોતા, તેમના સાહુઓને ધ્રાહણ્ણોજ ભાગુત્તા હતા અને બંધો પણ